भारतीय ग्रन्थमाला-संख्या १.

भारतीय शासन

भगवानदास माहेश्वरी (केला)
शीशमहल, मेरठ

संवत् १९७२ वि०
सन् १९१५ ई०

पं० सुदर्शनाचार्य्य, बी० ए०, के प्रबन्ध से
सुदर्शन प्रेस, प्रयाग में छपा ।

प्रथम संस्करण] [मूल्य सात आने

पुस्तक मिलने के पतेः—

'माहेश्वरी' कार्य्यालय,

अलीगढ़।

मैनेजर, "गृहलक्ष्मी-कार्य्यालय",

इलाहाबाद।

श्रीकृष्णः

भारत की

हिन्दी-भाषी समस्त हिन्दी सन्तान को

जो अपने देश की

राजनैतिक परिपाटी की

वास्तविक परिस्थिति से अभिज्ञ होना चाहती है

यह पुस्तक

सादर समर्पित की जाती है।

—ग्रन्थकर्त्ता

प्रस्तावना

शासन का कार्य यदि कठिन है तो इस विषय को सम-
ाने के अभिप्राय से कोई पुस्तक लिखना भी सहज नहीं। यह
चार हमें पहिले भी था और कार्य आरम्भ करने पर तो
सकी गुरुता और भी अच्छी तरह ध्यान में आ गयी। परन्तु
स भाषा का प्रचार आज दिन भारतवर्ष की अन्य किसी
ी भाषा से अधिक है, एवं जो हमारे राष्ट्र की राष्ट्रीय भाषा
ने का सच्चा दम भर सकती है, उस परम हितकारिणी
न्दी भाषा में शासन जैसे महत्व के विषय की मोटी मोटी
ातों का समावेश रखनेवाली पुस्तकों के न मिलने का दुःख
ब असहनीय हो चला, तो अल्प योग्यता और क्षुद्र शक्ति
खने पर भी हम इस पुस्तक को लिखने के लिए वाध्य हो
ये। नहीं मालूम कितने पाठक हमारी कठिनाइयों का अनु-
ान कर सकेंगे. अस्तु, आशा है कि वे इस साहस-युक्त कार्य
हमारी धृष्टता क्षमा करेंगे और विद्वानों के उचित परामर्श
ौर आलोचना से हम इस पुस्तक के आगामि संस्करण में
ाभ उठा सकेंगे।

इस पुस्तक के कई एक स्थलों पर हमें अंग्रेज़ी व हिन्दी
े पत्र पत्रिकाओं से सहायता मिली है, एवं अंग्रेज़ी की
न्यान्य पुस्तकों में से हमने विशेष सहायता मिस्टर ली.
ार्नर की सरल Citizen of India तथा महाशय वी. जी.
ाले एम. ए. की सामयिक (up-to-date) और उपयोगी
Indian Administration से ली है। उक्त लेखको के

हम अत्यन्त कृतज्ञ है। इनके अतिरिक्त हम और भी कई सज्जनों के पास ऋणी हैं। इस पुस्तक के लिखने में हमारे हिन्दी-प्रेमी मित्रों श्री० ब्रजमोहनलाल जी वर्मा, छिंदवाड़ा, और पं० उमरावसिंह जी, मेरठ, ने हमें बहुत सहायता दी, मातृ-भाषा-सेवी श्रीयुत बाबू मुखत्यारसिंह जी, वकील, मेरठ, ने इस पुस्तक का संशोधन करने एवं भूमिका लिखने की कृपा की; और मान्यवर महाशय गिरिजाकुमार जी घोप ने इसका प्रूफ आदि देखने का कष्ट उठाया। इन सब महानुभावों की इस निष्काम सहायता के लिए हार्दिक धन्यवाद देना हमारा परम् हर्षदायक कर्त्तव्य है।

इस पुस्तक में हमने भारतवर्ष के शासन-सम्बन्धी मोटी मोटी आवश्यक बातों का उल्लेख किया है, एवं कतिपय आन्दोलनो का संकेत कर दिया है, जिससे तत्वान्वेषी पाठकों को उन पर विचार करने का अवसर मिले और वे समय समय पर होनेवाली टीका टिप्पणियों से यथेष्ट लाभ उठा सकें। हम जानते हैं कि इस पुस्तक के कई एक विषयों पर पृथक् पृथक् स्वतन्त्र ग्रन्थ लिखे जा सकते हैं; परन्तु यह कार्य योग्यतर पात्रों के लिए छोड़, हमने एक ही स्थान पर सबके दिग्दर्शन मात्र से सन्तोष किया है। परमात्मा वह दिन शीघ्र दिखलावे जब हमारे धुरन्धर विद्वानों का ध्यान इस ओर आकर्षित हो, जनता की इन विषयों मे रुचि बढ़े और हिन्दी साहित्य की उक्त ग्रन्थों से पूर्ति हो। प्रस्तुत पुस्तक से हमारा अभिप्राय यह है कि हमारे भारतवासी बन्धु अपनी मातृभूमि के उत्तम नागरिक बनें, वे जान ले कि उनके देश के राज्य-प्रबन्ध की कल किस प्रकार चलती है, वे उसमें क्या भाग ले सकते है और ब्रिटिश प्रजा के नाते वे किन अधिकारो के

कारी हैं। आशा है कि सभी देशहितैषी पाठक अपनी
ी स्थिति व शक्त्यनुसार इस शुभ कार्य्य में हमारा
बटाएंगे जिससे हम विशेष सेवा करने को उत्साहित
शुभम्।

भगवानदास माहेश्वरी

नोट—हाल में हमें मालुम हुआ कि एक पुस्तक 'भारतीय शासन-
त' नाम से क्रमशः छपनी आरम्भ हो गयी है। परन्तु हमारी पुस्तक
े ही प्रेस में भेजी जा चुकी थी इस लिए इसके नामादि में कुछ
र्तन न हो सका।

—लेखक

भूमिका

यद्यपि हमारे पूर्वज राजनीति के जटिल प्रश्नों को न केवल समझना ही जानते थे, प्रत्युत उन पर नियमबद्ध समालोचनात्मक विचार भी कर सकते थे, खेद है कि आज कल शुक्रनीति और कौटिल्य-शास्त्र जैसी पुस्तकें नहीं मिलतीं जिनसे राजनैतिक नियमों का पता चले। जिस प्रकार विद्या की अनेक शाखाओं में हम अपने पूर्वजों का अनुकरण नहीं कर सकते, इसी प्रकार राजनीति जैसे उपयोगी आवश्यक विषय पर भी हम विचार करने को असमर्थ हैं। शोक से देखा जाता है कि जब कभी कोई राजनैतिक आन्दोलन देश में आरम्भ होता है तो जन साधारण उसके महत्व को नहीं समझ सकते; प्रायः यही कारण हमारी राजनैतिक असफलताओं का है। कोई देश अथवा कोई जाति किसी परिवर्तन को समर्थ नहीं है, जब तक कि जन-साधारण उस कार्य के महत्व को समझने के योग्य न हो। एक अंग्रेज़ी विद्वान ने ठीक ही कहा है कि जाति झोपड़ों में रहती है। हमारे यहां के कतिपय अंग्रेज़ी पढ़े लिखे विद्वान क्या कर सकते हैं जब तक कि सारी जाति के मनुष्य एक ही भाव से संचालित न हों।

हमारी भाषा में जिस प्रकार विद्या की और अनेक शाखाओं पर पुस्तकों का अभाव है, इसी प्रकार राजनैतिक विषयों पर पुस्तकें नहीं है। यह सत्य है कि कुछ समाचार-पत्र तथा पत्रिकाएं समय समय पर राजनैतिक विषयों की समालोचना करती रहती हैं, परन्तु जब तक हिन्दी भाषा में देश की शासन-रूपी कल को समझानेवाली उत्तमोत्तम

पुस्तकें न हों, उक्त समालोचनाओं से पूर्ण लाभ नहीं उठाया जा सकता। आवश्यकता है कि हमारा साहित्य इस विषय मे पूर्ण हो और राजनीति के मर्म पाठकों को भली प्रकार समझाये जावें।

देश की स्थिति तथा उसकी राजनैतिक संस्थाएं क्या हैं और किन किन नियमो पर उनका काम होता है, केवल इतना ही बतलाने के लिए यह पुस्तक निर्माण की गयी है। इसमे कठिन राजनैतिक सिद्धान्तो की मीमांसा, वे सिद्धान्त किन बातों पर निर्भर हैं, मनुष्य-जाति के लिए उनका अस्तित्व लाभदायक है अथवा हानिकारक, ऐसी बातो पर कोई विचार नहीं किया गया। वरन् इस पुस्तक मे भारतीय शासन-प्रणाली के मुख्य मुख्य ढंग, भारत सरकार का इंग-लैंड से तथा देशी राज्यो से राजनैतिक सम्बन्ध और अपनी प्रजा से वर्ताव, सरकारी आय-व्यय का लेखा, इत्यादि सब विषयो पर सक्षेप मे विवेचना की गयी है, जिससे इसके पाठको को भली भांति अपने राजा की नीति और नियमो का पता लग सके, एवं वे समयानुसार अपने देश की उन्नति तथा अवनति का जहां तक कि शासन-प्रणाली से उसका सम्बन्ध है विचार कर सके।

हमें पूर्ण आशा है कि विद्यार्थी तथा जन-साधारण इस पुस्तक से लाभ उठावेंगे और सरकार भी इसके प्रचारार्थ यथेष्ट सहायता देगी जिससे यह लोग नियमबद्ध कोई कार्य करने को समर्थ हो सके और राज्य में अधिक शांति फैले।

मुख्त्यारसिंह,
वकील,
मेरठ।

विषयानुक्रमणिका

द्वादश परिच्छेद

त्रयोदश परिच्छेद

चतुर्दश परिच्छेद

पञ्चदश परिच्छेद

षोड़श परिच्छेद

———

भारतीय शासन

प्रथम परिच्छेद

उपोद्घात

अंग्रेजों का व्यापारारम्भ
ईष्ट इन्डिया कम्पनी

जिस ब्रिटिश साम्राज्य के एक न एक स्थान में सूर्यदेव हर समय प्रकाश डालते रहते हैं, और जिसके राज-मुकुट में भारत का हीरा अत्यन्त दीप्यमान है, वह साढ़े तीन सौ वर्ष पहिले एक टापू के भीतर परिमित था। सन् १५८८ ई० में इंगलैंड का अपने प्रबल शत्रु स्पेन पर विजय पाना था कि उसकी शक्ति का सिक्का सारे योरप पर जम गया। जो व्यापार १६वीं शताब्दी के अस्सी वर्ष पुर्तगाल वालों के हाथ में रह कर स्पेन के आधिपत्य में गया था, उससे अब अंग्रेजों के भी लाभ उठाने का समय आया।

सन् १६०० ई० में प्रसिद्ध महारानी अलिज़बथ से सनद ले अंग्रेजी व्यापारियों ने ईष्ट इण्डिया कंम्पनी (East India Company) नामक समिति बनायी और भारतवर्ष के किनारों पर व्यापार करने लगे। आरम्भ में इन्होंने बम्बई, मद्रास, सूरत, फ़ोर्ट विलयम (कलकत्ता) आदि सामुद्रिक बन्दरों में अपने अड्डे जमाये। धीरे धीरे मुग़ल साम्राज्य की क्षीणता व निस्तेजता तथा अन्य व्यापारी समितियों के भय के कारण

इन्हें अपनी आत्मरक्षा की चिन्ता पड़ी और ये सेना का प्रबन्ध करने लगे।

कम्पनी का राज्य विस्तार

अंग्रेजों ने यहां समुद्र के खुले द्वार से प्रवेश किया, इस लिए इन्हें आरम्भ में किसी देशी शक्ति से सामना न करना पड़ा। जो सहधर्मी हालैंड पहिले स्पेन की शत्रुता में इनका सहायक था, उसीसे पहिले मुठभेड़ हुई। डच लोगों के परास्त होते होते फ्रांस भी मैदान मे आ उतरा। १८ शताब्दी के मध्य से कोई डेढ़ सौ वर्ष से अधिक समुद्री हुकूमत के लिए इंगलैंड और फ्रांस में बड़ा विकट मुक़ाबला रहा। दक्षिण-भारत का आधिपत्य पहिले फ्रांसीसियों के हाथ जाता दीखा, परन्तु अन्त में अंग्रेजों की ही सफलता रही। इसी बीच में सन् १७५७ व १७६४ ई० में प्लासी व वक्सर की लड़ाइयां हुईं। पहिली विजय से कम्पनी के हिस्से में बंगाल, विहार, उड़ीसा आया और दूसरी से उसे इलाहाबाद, कड़ा व बनारस मिले। इसी प्रकार राजनीति की कई एक कूट चालों से मरहट्टों की संघशक्ति टूटने पर महाराष्ट्र देश तथा दिल्ली आगरे का प्रान्त कम्पनी के हाथ आया, और मैसूर के सुलतान हैदर व टीपू के परास्त होने पर वर्तमान मद्रास प्रान्त की नीव पड़ी। पश्चात् वीरकेसरी रणजीत की मृत्यु पर सन् १८४५–४६ ई० तथा १८४८–४९ ई० के दो सिख युद्धों के बाद पंजाव कम्पनी की सीमान्तर्गत हुआ। वारिस न होने अथवा कु-प्रबन्ध के आधार पर लार्ड डलहौज़ी ने अवध, नागपुर, सितारा, झांसी आदि कई देशी रियासतें कम्पनी के राज्य में मिला लीं।

इस तरह वर्तमान अंग्रेजी भारत का बृहदंश सन् १८५७

तक कम्पनी के हस्तगत हुआ। इसका कुछ सविस्तार वर्णन चौथे परिच्छेद में होगा।

कारण

ऊपर जो हमने भारतवर्ष में कम्पनी के राज्य विस्तार सम्बन्धी इतिहास का विहंगावलोकन किया है, उससे यह समझना भ्रम होगा कि अंग्रेजों ने भारत को असि-बल से जीत पाया। असल में अंग्रेजों के भारत में राज्य स्थापन करने में युद्ध का बहुत थोड़ा भाग है। शान्ति-इच्छुक हिन्दुस्तानी प्रजा स्वतः कम्पनी के राज्य में रहना चाहती थी: वहां इन लोगों को अंधकार के स्थान में प्रकाश और गड़बड़ के स्थान में नियम-व्यवस्था मालूम हुई। अनुत्तरदायी शासकों से, पठान मुग़लों के अत्याचारों से, पिंडारी व लुटेरों के उपद्रवों से, हिन्दुस्तानी प्रजा जिस आराम की खोज कर रही थी, उसकी उसे कम्पनी की अधीनता में बहुत सम्भावना प्रतीत हुई, इसलिए उसने उसका स्वेच्छापूर्वक स्वागत किया।

भारत का राज्य-प्रबन्ध पार्लिमेंट के हाथ में जाना

यह भी ध्यान देने की बात है कि कोई जाति विदेश में शासन व व्यापार दोनों काम कुशलता पूर्वक सम्पादन नहीं कर सकती: ज्यों ज्यों कम्पनी भारत की स्वामिनी होती गयी, त्यों त्यों इसके व्यापाराधिकारों को ले लेने का विचार ब्रिटिश पार्लिमेंट में होने लगा। चुनांचे सन् १८१३ ई० के ऐक्ट् से कम्पनी को केवल चीन में व्यापार करने का अधिकार रह गया और भारत में इसका ठेका न रहा। पुनः सन् १८३३ ई० के ऐक्ट् से कम्पनी का रहा सहा चीन के व्यापार का अधिकार भी जाता रहा और वह एक शासक

समुदाय रह गयी जिस पर बोर्ड आफ कन्ट्रोल (Board of Control) द्वारा ब्रिटिश पार्लिमेंट निगरानी करती थी। पीछे सन् १८५७ ई० के सिपाही-उपद्रव के पश्चात् भारतीय शासन प्रगटरूप से ब्रिटिश पार्लिमेंट के अधीन हो गया जिसका वर्णन आगामी परिच्छेद में किया जावेगा।

भारतवर्ष का क्षेत्रफल व जनसंख्या

मोटे हिसाब से भारतवर्ष का क्षेत्रफल अठारह लाख वर्ग मील से कुछ अधिक और जनसंख्या साढ़े इकतीस कोटि से कुछ ऊपर है। नीचे की तालिका से उसके भिन्न भिन्न सरकारी प्रान्तों तथा देशी रियासतों का व्यौरेवार हिसाब (सन् १९११ की मनुष्यगणनानुसार) दिया गया है।

सरकारी प्रान्त	क्षेत्रफल	जनसंख्या
१—अजमेर मेरवाड़ा	२,७११	५,०१,३९५
२—अंडमान निकोबार	३,१४३	२६,४५९
३—आसाम	८३,०१५	६३,१३,६३५
४—कुर्ग	१,६८२	१,७४,९७६
५—पंजाब (देहली सहित)	९९,७७९	१,९९,७४,९५६
६—पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्त	१३,४१८	२१,९६,९३३
७—विहार-उड़ीसा	८३,१८१	३,४४,९०,०८४
८—बंगाल	७८,६९९	४,५४,८३,०७७
९—बम्बई	१,२३,०५७	१,९६,७२,६४२
१०—बर्मा	२,३०,८३९	१,२१,१५,२१७
११—बलोचिस्तान	५४,२२८	४,१४,४१२
१२—मद्रास	१,४२,२३०	४,१४.०५,४०४
१३—मध्य प्रान्त व बरार	९९,८२३	१,३९,१६,३०८
१४—संयुक्त प्रान्त	१,०७,२६७	४,७१,८२,०४४
समस्त अंग्रेजी भारत	१०,९३,०७४	२४,४२,६७,५४२

देशी रियासतें तथा एजंसिएं	क्षेत्रफल	जनसंख्या
१—आसाम रियासत (मनीपुर)	८,४५६	३,४६,२२२
२—कश्मीर	८४,४३२	३१,५८,१२६
३—पंजाब रियासतें	३६,५७१	४२,१२,७९४
४—पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्त (एजंसी आदि)	२५,५००	१६,२२,०९४
५—बलोचिस्तान रियासतें	८०,४१०	४,२०,२९१
६—बिहार-उड़ीसा	२८,६४८	३९,४५,२०९
७—बंगाल रियासतें	५,३९३	८,२२,५६५
८—बड़ौदा	८,१८२	२०,३२,७९८
९—बम्बई रियासतें	६३,८६४	७४,११,६७५
१०—मद्रास ” (ट्रावनकोर व कोचीन सहित)	१०,०८४	४८,११,८४१
११—मध्य भारत एजंसी	७७,३६७	९३,५६,९८०
१२—मध्य प्रान्त रियासतें	३१,१७४	२१,१७,००२
१३—मैसूर	२९,४७५	५८,०६,१९३
१४—राजपुताना एजंसी	१,२८,९८७	१,०५,३०,४३२
१५—सिक्कम	२,८१८	२७,९२०
१६—संयुक्त प्रान्त रियासतें (बनारस सहित)	५,०७९	८,३२,०३६
१७—हैदराबाद	८२,६९८	१,३३,७४,६७४
समस्त देशी रियासतें	७,०९,११८	७,०८,८८,८५४
समस्त भारतवर्ष का योग फल	१८,०२,१९२	३१,५१,५६,३९६

द्वितीय परिच्छेद

होम गवर्मेंट या विलायत सरकार

सेक्रेटरी आफ स्टेट या भारत-मंत्री और उसकी कौंसिल

पहिले कहा जा चुका है कि बोर्ड आफ कंट्रोल के स्थापित कर देने से कम्पनी की राज्य व्यवस्था में ब्रिटिश पार्लिमेंट को निगरानी का अधिकार मिल गया था। यह अधिकार क्रमशः बढ़ता गया। सन् १८५७ ई० के उपद्रव के पश्चात् यह आवश्यक समझा गया कि कम्पनी के हाथ से समस्त राज्यसत्ता निकाल ली जाय। इसलिए सन् १८५८ ई० में पार्लिमेंट ने एक कानून बना कर ईस्ट इन्डिया कम्पनी के भारतीय शासन सम्बन्धी सब अधिकार श्रीमती महारानी विक्टोरिया को दे दिये और उन्होंने यह कार्य अपने एक सेक्रेटरी आफ स्टेट (Secretary of State) अर्थात् राजमंत्री को सौंप दिया, जिसे भारत-मंत्री या वज़ीर-ए-हिन्द कहा जाता है। इस भारत-मंत्री की सहायता के लिए इसीके सभापतित्व में इन्डिया आफिस (India Office) नामक एक कौंसिल बनायी गयी। इस शासक समुदाय को होम गवमेंट (Home Government) या विलायत सरकार कहते हैं। होम शब्द का अर्थ घर है और यहां इससे अभिप्राय इंगलैंड से है।

कौंसिल के मेम्बर

कई एक परिवर्तनों के बाद इस समय इस कौंसिल के मेम्बरों की संख्या १० से १४ तक रहने लगी है। मेम्बर वे ही बन सकते है जो भारत सरकार की (Imperial) नौकरी में कम से कम दस

वर्ष तक रह चुके हों और जिन्हें यहां से नौकरी छोड़े पांच वर्ष से अधिक न हुए हों। प्रत्येक मेम्बर सात वर्ष के लिए चुना जाता है। विशेष कारण होने से यह समय पांच वर्ष और बढ़ाया जा सकता है। मेम्बर किसी भी देश या धर्म का क्यों न हो, इस बात की कोई कैद नहीं रहती। सन् १६०७ ई० से पहिले इस कौंसिल में कोई भारतीय मेम्बर न था। उस साल लार्ड मौरले की सुधार-स्कीम (Reform Scheme) के अनुसार जगह खाली होने पर दो हिन्दुस्तानी मेम्बर चुने गये और अब यह आशा की जाती है कि भविष्य में हिन्दुस्तानी मेम्बरों की संख्या यथेष्ट रहेगी।

कौंसिल के काम करने का ढंग

कौंसिल का कार्य कई एक भागों में विभक्त है। प्रत्येक विभाग के लिए एक स्थायी मंत्री रहता है और उस विभाग-सम्बन्धी प्रश्नों के विचार के लिए ४-५ मेम्बरों की एक कमेटी नियत की जाती है। इस समय यह कमेटिएं इस प्रकार हैं—

१—Finance—कोष।

२—Political & Secret—राजनैतिक तथा गुप्त।

३—Military—फौजी।

४—Revenue & Statistics—माल, तथा लेखा।

५—Public works—(पब्लिक वर्क्स्) इञ्जिनियरी आदि।

६—Stores—भंडार।

७—Judicial & Public—न्याय व सार्वजनिक।

साधारणतया प्रत्येक मेम्बर को दो कमेटियां में काम करना होता है और उनकी एक कमेटी से दूसरी कमेटी में

बदली हो सकती है। जब भारत गवर्मेंट पर किसी विषय की आज्ञा निकालनी होती है तो उस विषय से सम्बन्ध रखने वाले विभाग के मंत्री को भारत मंत्री की ओर से सूचना मिलती है और वह उसका मसविदा तय्यार करके अपनी कमेटी के सामने पेश करता है। उस समय यदि कमेटी के किसी मेम्बर को उस मसविदे में कुछ आपत्ति करनी हो, अथवा किसी परिवर्तन का प्रस्ताव करना हो, तो कर सकता है। कमेटी से पास होने पर मसविदा भारत-मंत्री की सेवा में जाता है, उसकी स्वीकृति पर उसे कौंसिल में पेश किया जाता है; यहां प्रायः विना किसी परिवर्तन के ही वह पास हो जाता है। इतनी कारखाई के बाद उक्त आज्ञा भारत सरकार को भेजी जाती है। कुछ हालतों में पार्लिमेंट की स्वीकृति भी आवश्यक है।

मेम्बरों के अधिकार

कौंसिल का काम यह है कि स्टेट-सेक्रेटरी को भारतीय विषयों में ज्ञान प्राप्त करावे। परन्तु मेम्बर लोग किसी विषय पर केवल अपनी सम्मति प्रगट कर सकते हैं। स्टेट सेक्रेटरी को अधिकार है कि उसे माने या न माने, उसे कोई बाध्य नही कर सकता। यह मेम्बर बाहर देशों के सम्बन्ध में, युद्धनीति में, तथा देशी रियासतों के मामलों में बिल्कुल हस्तक्षेप नही कर सकते।

सेक्रेटरी आफ स्टेट के अधिकार

स्टेट सेक्रेटरी भारतवर्ष के आय व्यय का हिसाब (Budget) प्रतिवर्ष पार्लिमेंट में पेश करता है। उस समय वह इस बात की सविस्तर रिपोर्ट देता है कि गत आलोचनीय वर्ष में भारतवर्ष की नैतिक, सामाजिक व राजकीय उन्नति किस प्रकार अथवा कितनी हुई है। समय समय पर

पार्लिमेंट को भारत-सम्बन्धी आवश्यक सूचना देते रहना भी उसीका काम है। पार्लिमेंट की आज्ञा विना भारतवर्ष की आमदनी को वह भारत की सीमा से वाहर नहीं खर्च कर सकता। सम्राट चाहें तो उसके द्वारा भारत गवर्मैंटकी कौंसिलके बनाये क़ानून को रद्द कर सकते हैं। गवर्नर-जनरल, बंगाल, बम्बई और मद्रास के गवर्नर, इनकी कौंसिलों के मेम्बर, हाई-कोर्ट के जज तथा अन्य उच्च राजकर्मचारियों की नियुक्ति के लिए वह सम्राट को सम्मति देता है, और भारत गवर्नमेंट के सब बड़े बड़े अफ़सरों को वह आज्ञा दे सकता है, और जिसे चाहे उसे नौकरी से छुड़ा सकता है और उन्हें अपने अधिकार का अनुचित वर्ताव करने से रोक सकता है, क्योंकि वह उस मंत्री-सभा के सभ्यों में से होता है जो इंगलैंड, स्काट-लैंड और आयरलैंड के सम्मिलित राज्य पर शासन करती है; उसे भारतीय शासन सम्बन्धी समस्त कार्य्यों की जवाबदेही ब्रिटिश पार्लिमेंट के सामने करनी पड़ती है।

साधारणतया जैसा कि मिल साहब (J. S. Mill) ने

विलायत-सरकार का काम

कहा है, विलायत-सरकार का कार्य्य यह है—"भारत सरकार के गत वर्षों की कार-रवाई की जांच पड़ताल करना, देश में उप-कारी व लाभदायक सिद्धान्तों का प्रचार करना, उन राज-नैतिक प्रश्नों में अपनी सम्मति व अनुमति देना जिनका सम्बन्ध इंगलैंड की राजनीति से हो।" संक्षेप में होम गवर्न-मेंट का काम केवल इतना ही है कि वह भारतीय राज्य-प्रणाली की बराबर उन्नति करती रहे और उसके सुधार में अनावश्यक विघ्न न डाले।

अनेक राजनीतिज्ञों ने यह स्वीकार कर लिया है कि

वर्तमान संगठन के रहते कौंसिल से विशेष लाभ नहीं है। परन्तु इसे यथेष्ट उपयोगी बनाने के लिए क्या क्या परिवर्तन आवश्यकीय हैं, इस विषय में मतभेद है। भारतमंत्री लार्ड क्रू (Lord Crew) (हाल में यह इस पद से अलग हो गये हैं) की स्कीम है कि कौंसिल के संगठन से कमेटी-पद्धति हटा दी जावे, तथा इसके प्रत्येक मेम्बर को किसी विशेष विभाग का उसी प्रकार उत्तर-दाता बना दिया जावे जैसा कि भारत सरकार की बड़ी कार्यकारिणी कौंसिल में होता है। कौंसिल के ये विभाग अपने अपने कार्य से सम्बन्ध रखनेवाले भारत सरकार के विभागों से यथेष्ट परिचय रक्खें। कौंसिल के मेम्बरों की संख्या घटा कर आठ से दस तक नियत कर दी जावे और उनकी वेतन १२००) रुपये मासिक रहे। परन्तु इन परिवर्तनों के पश्चात् भी बहुतों को उद्देश्य सिद्धि में संदेह ही रहता है।

संगठन-सुधार प्रस्ताव

लार्ड वैल्बी के कमिशन की सम्मति यह है कि इस कौंसिल में भारतीय बड़ी तथा प्रान्तिक व्यवस्थापक सभाओं द्वारा निर्वाचित योग्य अनुभवी भारतीय कर्मचारियों की संख्या यथेष्ट रहनी चाहिए। एक अन्य मत—और यह जनता को विशेषतया पसन्द है—इस प्रकार है कि यह कौंसिल बिल्कुल उड़ा देनी चाहिए। अन्यान्य ब्रिटिश उपनिवेशों के राजमंत्रियों की कौंसिलें नहीं होती, भारत-मंत्री को भी बिना कौंसिल ही काम चला लेना चाहिए; हां भारतीय शासन-कार्य की निगरानी के लिए पार्लिमेंट के कुछ स्वाधीन मेम्बरों की एक स्थायी कमेटी रहा करे। कहना नहीं होगा कि यदि अन्तिम व्यवस्था से कार्य्य सुचारु-रूप से हो सके, तो कौंसिल

के ठाठ की कुछ आवश्यकता नहीं। भारत सरकार को कितने ही सार्वजनिक कार्यों में धनाभाव की बाधा प्रतीत होती है; इस लिए जितनी मित-व्ययता हो सके, उतना ही अच्छा।

तृतीय परिच्छेद

भारत सरकार

वाइसराय और बड़ी कौंसिल

पिछले अध्याय से विदित हो गया होगा कि भारतवर्ष का राज्य इंगलैंड के महाराज व पार्लिमेंट के अधीन है: वे भारत-मंत्री तथा उसकी कौंसिल द्वारा यहां के सब राज काज की निगरानी करते हैं। इंगलैंड महाराज की ओर से भारतवर्ष में गवर्नर-जनरल राज्य करता है जो उनका वाइसराय (Viceroy) अर्थात् प्रतिनिधि है; उसे बड़ा लाट भी कहते हैं। उसकी एक कार्यकारिणी सभा होती है, जिसे भारतीय शाही या बड़ी (Imperial अथवा Supreme) कौंसिल कहते हैं।

कौंसिल का संक्षिप्त इतिहास

कम्पनी के आरम्भ समय में बंगाल, मदरास और बम्बई के प्रान्त अपना अपना प्रबन्ध अपनी स्व-तंत्र कौंसिलों द्वारा कर लिया करते थे। इन सब का प्रधान कार्यालय इंगलैंड में रहता था; उसे कोर्ट आफ़ डाइरेक्टर्स (Court of Directors) कहते थे। परन्तु सन् १७७३ ई० में रेग्युलेटिंग एक्ट् (Regulating Act) पास होने से बम्बई-मदरास सरकार बंगाल सरकार के अधीन रक्खी गयी। बंगाल का गवर्नर गवर्नर-जनरल कहलाया जाने लगा। उसकी सहायताके लिए चार मेम्बरों

की कौंसिल बनायी गयी। उक्त ऐक्ट में बड़ी भारी त्रुटि यह थी कि गवर्नर-जनरल अपनी कौंसिल के मन्तव्यों से विरुद्ध कुछ भी नहीं कर सकता था। सन् १७८४ ई० में पिट (Pitt) का ऐक्ट पास हुआ जिससे गवर्नर-जनरल को मदरास व बम्बई पर पूरा अधिकार हो गया। कौंसिलों के मेम्बरों की संख्या को घटा कर ३ कर दी गयी, इनमें से एक जंगी लाट और २ और मेम्बर होते थे। अब गवर्नर-जनरल को यह अधिकार मिल गया था कि वह अपनी कौंसिल के मत के विरुद्ध भी कार्य कर सके। सन् १८१३ ई० में एक कानूनी सलाहकार (Law member) इंगलैंड से भेजा गया, जिसे १८५३ ई० मे कार्यकारिणी कौंसिल में बैठने का अधिकार दिया गया। इस प्रकार पुनः मेम्बरो की संख्या सन् १७७४ ई० ई० की नाईं चार हो गयी। सन् १८६१ ई० के इंडियन कौंसिल (India Council) के ऐक्ट से गवर्नर-जनरल की कौंसिल में पांचवां मेम्बर बढ़ाया गया और जंगी लाट भी एक अलग मेम्बर वाइसराय की कौंसिल में बनाया गया। सन् १९०७ ई० में पुनः परिवर्त्तन हुआ। आजकल गवर्नर-जनरल की कौंसिल मे जंगी लाट के अतिरिक्त ६ साधारण (Ordinary) मेम्बर रहते हैं जिन्हें नीचे लिखे १–६ तक के विभागों में से एक एक का अधिकार है। ७–९ तक के विभागों के लिए कोई मेम्बर नही रहता।

भारत सरकार का समस्त कार्य नौ भागों में विभक्त होता है।

कार्य विभाग

१—(Finance) कोष विभाग। इसमें आय के कई एक श्रोत, डाकखाना, तार, अफीम, चुंगी, नमक, सिक्का और टकसाल भी मिला दिये गये हैं।

२—(Home) होम डिपार्टमेंट में इस प्रकार के कार्य सम्मिलित हैं जैसे न्याय का महकमा, ईसाई धर्म सम्बन्धी बातें।

३—(Law) क़ानून विभाग। यह क़ानून और उन नियमों को बनाता है जो क़ानून के अनुसार बननी चाहिए; और यह क़ानून के विषय में अन्य विभागों को सलाह देता है।

४—(Revenue & Agriculture) मालगुज़ारी और कृषि विभाग। इसीमें देश की पैमाइश, बन्दोबस्त, जंगल और नई चीज़ों का पेटन्ट देने का अधिकार मिश्रित है। अकाल का प्रबन्ध भी इसीके हाथ में रहता है।

५—व्यापार और दस्तकारी-विभाग।

६—शिक्षा विभाग। इसमें स्वास्थ्य और म्यूनिसिपलिटियां भी शामिल हैं।

७—सेना विभाग। यह कमांडर-इन-चीफ़ के अधीन है।

८—रेलवे विभाग। यह तीन विशेषज्ञों (Experts) के एक बोर्ड के अधीन है और कौंसिल के व्यापार और दस्तकारी वाले मेम्बर को ही इस विषय में बोलने का अधिकार है।

९—(Foreign) विदेश-विभाग। इसे गवर्नर-जनरल अपने हाथ में रखता है। इसका सम्बन्ध देशी रजवाड़ों और विदेशी राज्यों से रहता है।

कौंसिल के काम करने का ढंग

उपरोक्त विभागों में से प्रत्येक पर एक एक सरकारी सेक्रेटरी तथा उसके दो तीन सहायक रहते हैं। जब किसी विभाग सम्बन्धी कोई विचारणीय प्रश्न उठता है, उसका सेक्रेटरी मसविदा तय्यार करके गवर्नर-जनरल या उस मेम्बर

के सामने पेश करता है जिसके अधीन उक्त विभाग हो। साधारणतया मेम्बर उस पर जो निर्णय करता है वही अन्तिम फैसला समझा जाता है· परन्तु यदि प्रश्न विवादग्रस्त हो या उसमें सरकारी नीति की बात आती हो, तो सेक्रेटरी से तय्यार किया हुआ मसविदा कौंसिल मे पेश होता है और वहां से जो हुक्म हो उसे सेक्रेटरी प्रकाशित करता है। कौंसिल के साधारण अधिवेशनो में मतभेदवाले प्रश्नों के विषय में बहुमत से काम करना पड़ता है· यदि दोनों पक्ष समान हों तो जिस तरफ गवर्नर-जनरल मत प्रगट करे, उसी पक्ष के हक में फ़ैसला होता है। मगर गवर्नर जनरल को इस बात का अधिकार रहता है कि यदि उसकी समझ में कौंसिल का निर्णय देश के लिए हितकर न हो तो कौंसिल के बहुमत की भी उपेक्षा कर अपनी सम्मति-अनुकूल कार्य्य कर सकता है। परन्तु ऐसा करते समय आवश्यकता होने पर उसे उचित कारण दर्शाना भी होता है।

वाइसराय की कौंसिल के मेम्बरों और भिन्न विभागों के सेक्रेटरियो के अतिरिक्त डाइरेक्टर जनरल और इन्सपेक्टर जनरल जैसे कुछ और भी सरकारी कर्मचारी रहते हैं जिनका काम यह है कि सरकारी और प्रान्तिक कार्यों की निगरानी रक्खें और उन्हें यथोचित सलाह दिया करें।

भारत सरकार के कार्य

भारत सरकार को प्रथम तो वह कार्य करने होते हैं जिनका सम्बन्ध समग्र देश से है और जिन्हें प्रान्तिक सरकार सुभीते से नहीं कर सकती। इनमें से मुख्य निम्नलिखित हैं—

१—विदेशों से सम्बन्ध, युद्ध, सन्धि और राज-प्रतिनिधियों का प्रबन्ध।

२—स्थल और जल की सेना का प्रबन्ध।

३—मालगुजारी, महसूल, दिवानी, फौजदारी आदि के ऐसे क़ानून बनाना जिनका समस्त ब्रिटिश इन्डिया में प्रचार करना हो।

४—टैक्स ठहराना (Taxation); राज का ऋण (Public Debt); सिक्के व नोट का चलन; डाक, तार व रेल।

५—खनिज पदार्थों को निकालने की शर्तें ठहराना।

६—भारत-मंत्री को आवश्यकीय विषयों की सूचना देना और उसकी सम्मतिपूर्वक अन्य देशों से भारतीय व्यवसाय का निश्चित करना।

७—प्रान्तों तथा म्युनिसिपलिटियों व देहाती बोर्डों को ऋण अथवा ऋण लेने की अनुमति देना।

प्रान्तिक सरकारों के सम्बन्ध में भारत सरकार के काम ये हैं—उनके प्रबन्ध, क़ानून तथा व्यय की निगरानी करना; उनके कार्य संचालन की नीति ठहराना; उनके विरुद्ध अपीलों की सुनवाई करना एवं उन्हें किसी अधिकार विशेष को व्यवहार में लाने की आज्ञा देना।

गवर्नर-जनरल

स्टेट सेक्रेटरी की शिफारिश से इंगलैंड महाराज किसी योग्य अनुभवी और उच्च घराने के कर्म्मचारी को गवर्नर-जनरल नियुक्त करते हैं। सन् १८५८ ई० की महारानी विक्टोरिया की घोषणा में लार्ड केनिंग को 'पहला गवर्नर जनरल और वाइसराय (प्रतिनिधि)' लिखा गया था। तब से ये दोनों शब्द समानार्थवाची हो

चले हैं। साधारणतया उनकी अवधि पांच साल की रहती है, परन्तु क़ानून से यह समय निश्चित् किया हुआ नहीं है और सुभीते के अनुसार घटाया बढ़ाया जा सकता है।

गवर्नर-जनरल के अधिकार निम्न-लिखित प्रकार के हैं जिनका उल्लेख उनके निर्दिष्ट स्थान पर किया गया है—

(१) भारतीय बड़ी (Imperial) कार्यकारिणी कौंसिल में।
(२) भारतीय बड़ी व्यवस्थापक सभा के विषय में।
(३) प्रान्तों की निगरानी का।
(४) देशी रियासतों के सम्बन्ध में।

चतुर्थ परिच्छेद

प्रान्तिक सरकार

अंग्रेजी भारत

इस परिच्छेद में भारतवर्ष के केवल उतने ही हिस्से की स्थानीय राज्यप्रणाली पर विचार किया जावेगा जो प्रत्यक्ष सरकार अंग्रेजी के अधीन है। इसे ब्रिटिश इन्डिया या अंग्रेजी भारत कहते हैं और जैसा कि पहिले कहा गया है, इसका क्षेत्रफल समस्त भारतवर्ष के क्षेत्रफल से दो तिहाई से कुछ कम अर्थात् लगभग ११ लाख वर्ग मील है और यहां की जनसंख्या सारे हिन्दुस्तान की तीन चौथाई के करीब है, अर्थात् २४ कोटि से ऊपर आदमी यहां निवास करते हैं।

इसके प्रान्त

आरम्भ में यह कल्पना कठिन थी कि अंग्रेजी राज्य भारतवर्ष में इतना विस्तृत हो जायगा। कम्पनी ने पहिले मद्रास, बम्बई, बंगाल के नाम से तीन प्रेसीडेन्सी (Presidencies) अर्थात् अहाते

बनाये। इनमें से प्रत्येक एक सभापति (गवर्नर) और उसकी कौंसिल के अधीन रहता था। इनको इंगलैंड में अपने काम की जवाबदेही कोर्ट आफ डाइरेक्टर्स (Court of Directors) से करनी होती थी। धीरे धीरे कम्पनी के अधिकार में अधिक भूमि आती गयी और वह इसे सुभीते अनुसार उपर्युक्त तीन प्रान्तों में से किसी न किसी में शामिल करती गयी। जब इनकी सीमा बहुत बढ़ चली तो नवीन प्रान्तों की सृष्टि करनी पड़ी। प्रान्तों की संख्या वा सीमा कभी कभी सदैव के लिए निश्चित् नहीं की जा सकती, आवश्यकतानुसार इनमें परिवर्तन होता ही रहता है।

वर्तमान समय में छोटे बड़े सब प्रान्तों की संख्या १५ है। इनकी वर्तमान शासन-प्रणाली भली भांति समझने के लिए इनका प्रारम्भिक इतिहास जान लेना आवश्यक है, अतः उसे भी संक्षिप्त रूप से लिखे देते हैं।

१—मद्रास

यह सबसे प्रथम सरकारी प्रान्त बना। सन् १६३९ ई० में वह भूमि खरीदी गयी जहां अब सैंट जार्ज (Saint George) का किला है। सन् १६५३ ई० में यह प्रेसीडेन्सी बना दिया गया। सौ वर्ष तक अंग्रेजों के पास रहने के पश्चात् इसे फरासीसियों ने जीत लिया, परन्तु सन् १७५७ ई० में यह पुनः अंग्रेजों के हाथ में आ गया और इसके साथ मछलीपट्टन भी मिला। बक्सर के युद्ध के बाद इलाहाबाद की संधि से शाहआलम द्वारा कम्पनी को उत्तरी सरकार मिल गया। पश्चात् अंग्रेजो के हैदर अली (जिसने सन् १७६१ ई० में अपने हिन्दू स्वामी से मैसूर का राज्य छीन लिया था) और उसके बेटे टीपू सुलतान से चार युद्ध हुए। अन्त में सन् १७९९ ई० में मैसूर की

राजगद्दी पुराने हिन्दू वंश को दी गयी। इससे मद्रास प्रान्त में पांच जिले और बढ़े। हैदराबाद के निज़ाम से भी दो ज़िले मिले और सन् १७३८ ई० मे कर्नूल मिल जाने पर मद्रास प्रान्त पूरा हुआ। सन् १८६२ ई० मे मद्रास सरकार ने उत्तरी कनारा का उत्तरी जिला बम्बई सरकार को दे दिया। इस प्रकार मद्रास, व्यापारियों की बस्ती से, फ्रांस वालों की लड़ाई से, तथा बादशाह के दान और मैसूर के सुलतान की हार से ब्रिटिश भारत का एक प्रान्त बना है।

२—बम्बई

सन् १६१४ ई० में अंग्रेजों को दिल्ली के बादशाह से भारतवर्ष के पश्चिमी किनारों पर व्यापार करने की अनुमति मिल गयी थी। सन् १६६८ ई० में जब इंगलैंड के बादशाह को पुर्तगाल वालों से बम्बई मिली, तो सदर दुकान सूरत से उठाकर बम्बई में लायी गयी। १०० वर्ष के बाद जब पेशवा नारायण राव की मृत्यु पर स्वार्थी राघोबा ने अपने ही बन्धुओं के विरुद्ध अंग्रेजों की सहायता मांगी, तो सलबई की संधि से बसीन, सलसट तथा बम्पई के आस पास के टापू अंग्रेजो को मिले। पश्चात् मरहटों की संघ-शक्ति क्रमशः टूटती गयी। अन्त में सन् १८१७ ई० में किरकी की लड़ाई के पीछे कोकन व दक्षिण देश बम्बई अहाते में मिल गये। सन् १८४३ ई० में सिंध तथा अदन का बन्दर भी इसी प्रान्त में मिला लिये गये।

३—बंगाल

यहां अंग्रेजो की पहिली दुकान सन् १६४२ ई० मे बलासोर (बालेश्वर) में खोली गयी थी। सन् १७०० ई० मे कम्पनी ने बंगाले के हाकिम की आज्ञा से कलकत्ता मोल लिया। सन् १७५७ में प्लासी की लड़ाई और पश्चात् सन् १७६५ ई० में बक्सर के युद्ध से कम्पनी को बंगाल-

विहार-उड़ीसा की दिवानी मिल गयी; सन् १७७४ ई० में यहां का गवर्नर भारतवर्ष का गवर्नर-जनरल बनाया गया और वह मद्रास, बम्बई के गवर्नरों से ऊपर समझा जाने लगा। पश्चात् पश्चिमोत्तर देश इसीके अधिकार में कर दिया गया और यह सन् १८३४ ई० तक वंगाल में सम्मिलित रहा। सन् १८२६ ई० में आसाम और १८५० में शिकम की भूमि भी इसीमें मिला दी गयी। सन् १८५४ ई० में वंगाल के लिए भारतवर्ष के गवर्नर-जनरल से पृथक् एक गवर्नर की स्वीकृति हुई, परन्तु उस अहाते को केवल लेफ़्टनेंट-गवर्नर से ही संतोष करना पड़ा। सन् १८७४ ई० में आसाम अलग एक चीफ़ कमिश्नर के अधीन कर दिया गया। सन् १९०५ ई० में वंगाल के शासन का भार कम करने के लिए इसके कुछ जिले आसाम में मिला कर 'पूर्वी वंगाल और आसाम' नामक प्रान्त बनाया गया और उसके लिए एक लेफ़्टनेंट गवर्नर नियत किया गया। परन्तु इस प्रकार के वंग-विच्छेद से केवल बंगाली ही नहीं, वरन् समस्त हिन्दुस्तानी प्रजा में विकट असंतोष की लहर उठी। इस पर सन् १९११ ई० में भारत सम्राट पंचम जार्ज ने दिल्ली दरबार के अवसर पर सम्पूर्ण बंगाल को एक गवर्नर के अधीन कर दिया। विहार, उड़ीसा और छोटा नागपुर के लिए एक लेफ़टनेंट गवर्नर नियत हुआ और आसाम को सन् १९०५ ई० के पूर्व की स्थिती के अनुसार पुनः चीफ़ कमिश्नर ही मिला।

इस प्रकार जिस भूमि पर सन् १८५४ से १९०५ ई० तक केवल एक लेफ़्टनेंट गवर्नर था, तथा जहां सन् १९०५ से १९११ ई० तक दो लेफ़्टनेंट गवर्नर रहे, वहां १९१२ ई० से एक गवर्नर, एक लेफ़टनेंट गवर्नर और एक चीफ़ कमिश्नर (कुल मिला कर तीन शासक) नियत किये गये।

इसका उल्लेख अभी बंगाल के विषय में हो चुका है।

४—विहार-उड़ीसा

इस नवीन प्रान्त की सृष्टि सन् १९१२ ई० से हुई जब इसे एक लेफ़्टनेंट गवर्नर मिला।

सन् १८०३ ई० के मरहटा युद्ध में सिंधिया को अंग्रेजों ने

५—संयुक्त प्रान्त

असाई व लासवारी पर हार दी और उन्होंने आगरा व दुआव पर अधिकार प्राप्त किया। यह 'आगरा प्रान्त' आरम्भ से बंगाल प्रान्त का ही भाग समझा गया था। सन् १८११ ई० में नागपुर के राजा से सागर व नर्मदा देश मिला और पांच वर्ष पीछे गुर्खा युद्ध के परिणाम रूप कमांऊ, गढ़वाल और देहरादून कम्पनी के हाथ आये। सन् १८३४ ई० में इस समस्त प्रदेश के लिए कार्यकारिणी कौंसिल सहित एक गवर्नर की स्वीकृति हुई, परन्तु मिला इसे केवल लेफ़्टनेंट गवर्नर ही। अस्सी वर्ष हो गये, परन्तु गवर्नरी देने का वादा अभी तक पूर्ण नहीं हो पाया। उस समय अंग्रेजी राज्य की सीमा पर होने से इसका नाम पश्चिमोत्तर प्रान्त पड़ा।

लार्ड डलहौजी ने १८५६ ई० में अवध को भी अंग्रेज़ी राज्य में मिलाया और यहां एक चीफ कमिश्नर नियत किया। सन् १८७७ ई० में यह पूर्वोक्त पश्चिमोत्तर प्रान्त मे मिला दिया गया। इस प्रकार बढ़े हुए प्रान्त पर भी शासक केवल लेफ़्टनेंट गवर्नर ही रहा।

सन् १९०१ मे पंजाब के उत्तर-पश्चिम में सीमा प्रान्त बना देने पर उक्त पश्चिमोत्तर देश का नाम 'आगरा व अवध के संयुक्त प्रान्त' में परिवर्तित किया गया।

सन् १८४६ ई० मे, पहिले सिख युद्ध के पश्चात्, पंजाब

में अल्पवयस्क राजा के लिए सरकारी रीजेंट नियत हुआ।

६—पंजाब

फिर सन् १८४९ ई० में दूसरे सिख युद्ध की समाप्ति पर इस प्रान्त में अंग्रेजों का अधिकार हो गया और यहां के शासन के लिए तीन मेम्बरों का एक बोर्ड नियत किया गया। सन् १८५३ में यहां चीफ कमिश्नर मुकर्रर हुआ। ग़दर के बाद दिल्ली पश्चिमोत्तर देश से निकाल कर पंजाब में मिला ली गयी और पीछे सन् १८५९ ई० में यहां लेफ़्टनेंट गवर्नर नियत हुआ। सन् १९१२ ई० से दिल्ली का एक स्वतंत्र प्रान्त बनाया गया।

७—ब्रह्मा

सन् १८२६ ई० के प्रथम ब्रह्मा युद्ध से अराकान तनासरम् व टेवा कम्पनी को मिले और इन पर एक कमिश्नर नियत हुआ। दूसरे युद्ध के पश्चात् १८५६ में पीगू पर अधिकार प्राप्त हुआ और यहां भी एक कमिश्नर नियत हुआ। अनन्तर सन् १८६२ ई० में इस समस्त प्रदेश पर दो कमिश्नरों के स्थान में एक चीफ कमिश्नर नियत किया गया। सन् १८८५ में उत्तर-ब्रह्मा अंग्रेजी राज्य में मिलाया गया। तब से उत्तर-दक्षिण ब्रह्मा मिला कर सम्पूर्ण ब्रह्मा एक छोटे लाट (लेफ़्टनेंट गवर्नर) के अधीन रक्खा गया। रंगून का बन्दर व्यवसाय के बड़े महत्व का है।

८—आसाम

इसका उल्लेख बंगाल प्रान्त के विषय में आ चुका है। प्रथम ब्रह्मा युद्ध से यह अंग्रेजों के हाथ आया, तब से सन् १८७४ तक यह बंगाल सरकार के ही अधीन रहा। पश्चात् यहां एक चीफ कमिश्नर नियत हुआ। यह प्रान्त सन् १९०५ से १९१२ ई० तक पूर्वी बंगाल के साथ लेफ़्टनेंट गवर्नर के अधीन रहा। अब पुनः यहां चीफ़ कमिश्नरी ही स्थापित हुई है।

९—मध्य प्रान्त, बरार

पश्चिमोत्तर देश से सागर व नर्मदा के जिले लेकर तथा उनमें नागपुर (जो सन् १८५४ ई० में राजा के मर जाने से सरकारी राज्य में मिला लिया गया था) मिला कर सन् १८६१ में चीफ़ कमिश्नर की अधीनता में 'मध्य प्रान्त' नामक प्रान्त बनाया गया।

बरार सन् १८५३ ई० में निजाम हैदराबाद ने सरकार अंग्रेजी को इस निमित्त से दिया कि वहां की आमदनी से हैदराबाद की सरकारी सेना का खर्च चलाया जावे और जो आय शेष रहे वह निज़ाम को मिल जाया करे। इस पर बरार में हैदराबाद के रीजेंट के अधीन एक कमिश्नर नियत किया गया। सन् १९०२ ई० से निज़ाम को मिलने वाली रक़म २६ लाख रुपये ठहरा दी गयी। अब शासन के विचार से मध्य प्रान्त और बरार सम्मिलित ही हैं—यद्यपि नाममात्र को बरार पर निज़ाम के भी कुछ अधिकार चले आते है।

१०—अजमेर-मेरवाडा

अंतिम मरहठा युद्ध के पश्चात् सन् १८१८ ई० में सिंधिया से अंग्रेजों को अजमेर मिला और मेर-वाड़ा लुटेरों से छीन लिया गया। गवर्नर-जनरल का राजपुताने की रियासतों का एजंट ही यहां का चीफ़ कमिश्नर होता है।

११—कुर्ग

सन् १८३४ ई० में लार्ड विलियम बेन्टिंग ने प्रजा की सम्मति से कुर्ग को अंग्रेजी राज्य में मिला लिया। मैसूर का रेजिडेंट चीफ़ कमिश्नर की हैसियत से इस छोटे से सूबे का शासन करता है।

इन टापुओं का सुपरिंटेंडेंट एक चीफ़ कमिश्नर है जो पोर्ट ब्लेयर में रहता है। सन् १८५८ ई० से यह हिन्दुस्तान के देश निकाले के अपराधियों के रहने की जगह है।

१२—अंडमान-निकोबार

कलात के ख़ान से सन् १८७६ ई० में क्वेटा खरीदा गया। इसमें निकटवर्ती भूमि मिला कर सन् १८८६ ई० में ब्रिटिश-बलोचिस्तान नाम का छोटा सा प्रान्त बना दिया गया और यहां एक चीफ़ कमिश्नर नियत किया गया।

१३—ब्रिटिश-बलोचिस्तान

पंजाब के कुछ ज़िले लेकर और उनमें कुछ आस पास की भूमि मिला कर सन् १६०१ ई० में इस नाम का एक नवीन प्रान्त चीफ़ कमिश्नर के अधीन कर दिया गया, जिससे भारत सरकार पश्चिमी सीमा की भली प्रकार निगरानी कर सके।

१४—पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्त

ग़दर के बाद देहली पश्चिमोत्तर प्रदेश से निकाल कर पंजाब सरकार के अधीन कर दी गयी थी। सन् १६१२ ई० में राजधानी को कलकत्ते से बदल कर देहली लाना आवश्यक समझा गया। तब से इस शहर तथा इस ज़िले की कुछ आस पास की भूमि पंजाब प्रान्त से जुदा कर एक चीफ़ कमिश्नरी बना दी गयी।

१५—देहली

लगान, आबकारी, टिकट (स्टाम्प) तथा टैक्स की आय में भारतीय और प्रान्तिक सरकार दोनों ही हिस्सा लेतीं हैं। पुलिस, न्याय, जेल, शिक्षा, आबपाशी, सड़क, जंगल, पबलिक मकानात, म्युनिसिपल और देहाती बोर्डों की देख भाल का काम,

प्रान्तिक सरकार के काम

लगान ठहराना और वसूल करना तथा आन्तरिक शासन सम्बन्धी काम प्रान्तिक सरकार के सुपुर्द हैं।

नीचे की तालिका से ब्रिटिश इंडिया के वर्तमान १५ प्रान्तों की शासन विधि का परिचय मिलेगा। ये ५ प्रकार के हैं—

(क) जिन्हें गवर्नर तथा कार्यकारिणी व व्यवस्थापक दोनों कौंसिलें मिली हुई हैं।

(ख) जिन्हें लेफ़्टनेंट गवर्नर और दोनों कौंसिलें मिली हुई हैं।

(ग) जिन्हें लेफ़्टनेंट गवर्नर और एक (व्यवस्थापक) कौंसिल मिली हुई है।

(घ) जिन्हें चीफ़ कमिश्नर और एक (व्यवस्थापक) कौंसिल मिली हुई हैं।

(ङ) जिन्हें केवल चीफ़ कमिश्नर ही मिला हुआ है और कोई कौंसिल नहीं।

भेद	संख्या	प्रान्त	राजधानी	शासक	शासन पद्धति
(क)	१	मद्रास	मद्रास	गवर्नर	कार्यकारिणी और व्यवस्थापक दोनों कौंसिलें हैं
	२	बम्बई	बम्बई	"	
	३	बंगाल	कलकत्ता	"	
(ख)	४	विहार-उड़ीसा	पटना	लेफ़्टनैंट गवर्नर	"
(ग)	५	संयुक्त प्रान्त	इलाहाबाद	"	केवल व्यवस्थापक कौंसिल है
	६	पंजाब	लाहौर	"	
	७	ब्रह्मा	रंगून	"	

(घ)	८	आसाम		चीफ़ कमिश्नर	केवल व्यवस्थापक कौंसिल है
	९	मध्य-प्रान्त व बरार	नागपुर	”	
(ङ)	१०	अजमेर-मेरवाड़ा	अजमेर	”	कोई कौंसिल नहीं
	११	कुर्ग	मरकारा	”	
	१२	अंडमान-निकोबार	पोर्ट-ब्लेयर	”	
	१३	ब्रिटिश बलोचिस्तान	क्वेटा	”	
	१४	पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्त	पेशावर	”	
	१५	देहली	देहली	”	

अब हम इन शासकों तथा इन कौंसिलों के अधिकारों के विषय में कुछ उल्लेख करेंगे; किन्तु सब से पूर्व यह जान लेना चाहिए कि गवर्नर-जनरल को भिन्न भिन्न प्रान्तों पर कैसे अधिकार प्राप्त हैं।

गवर्नर-जनरल

जिन प्रान्तों में गवर्नर नियुक्त किये हुए हैं, वहां के कार्य की गवर्नर-जनरल केवल रखवाली व निगरानी ही करते हैं। जिन प्रान्तों पर लेफ्टनेन्ट गवर्नर या चीफ़ कमिश्नर नियुक्त हैं, वहां गवर्नर-जनरल के अधिकार अधिक हैं और कानून से उनकी तफ़सील ठहरायी हुई है। ये प्रान्त पहिले गवर्नर-जनरल के ही अधिकार में थे और अब केवल उसके काम को हलका करने के लिए ही उन्हें ये शासक मिले हैं।

गवर्नरों की नियुक्ति क्राउन यानी इंगलैंड के महाराज (Crown) की तरफ़ से होती है। वे प्रायः उच्च पद के उन

व्यक्तियों में से चुने जाते हैं, जिन्हें (United Kingdom) सम्मिलित राज्य में शासन का अनुभव हो। उनकी कौंसिल में दो सिवीलियन और एक हिन्दुस्तानी रहते हैं, जिन्हें सेक्रेटरी की शिफ़ारिश पर क्राउन (Crown) ही नियत करता है। गवर्नर-जनरल की भांति ख़ास ख़ास हालतों में यह भी अपनी कौंसिल के निर्णय के विरुद्ध काम कर सकते हैं। आर्थिक विषयों को छोड़कर अन्य विषयों में वे सीधे सेक्रेटरी आफ़ स्टेट से पत्र व्यवहार कर सकते हैं। प्रान्तों के कुछ पदों की नियुक्ति उनके अधीन रहती है और अपने प्रान्त के ज़िलों की ज़मीन के लगान के बारे में भी वे बहुत कुछ स्वाधीन हैं।

गवर्नर

लेफ़्टनेन्ट गवर्नर की नियुक्ति गवर्नर-जनरल ही कर देते हैं। परन्तु इसके लिए उन्हें (Crown) क्राउन की स्वीकृति लेनी होती है। ये इंडियन सिविल सर्विस (Indian Civil Service) के मेम्बरों में से चुने जाते हैं और इन्हें भारतवर्ष में कम से कम दस वर्ष की सरकारी नौकरी का अनुभव होना चाहिए। जहां कार्यकारिणी कौंसिल नहीं है, वहां लेफ़्टनेन्ट गवर्नर को रेवन्यू बोर्ड (Revenue Board) अथवा पंजाब और ब्रह्मा की हालत में उन्हें फाइनैंशल (अर्थ) कमिश्नर (Financial Commissioner) से सहायता मिलती है।

लेफ़्टनेन्ट गवर्नर

चीफ़ कमिश्नरों को गवर्नर-जनरल ही नियत करते हैं। साधारण समझ ऐसी रहती है कि चीफ़ कमिश्नरी गवर्नर-जनरल के ही अधीन है और वहां चीफ़ कमिश्नर गवर्नर-जनरल के प्रतिनिधि रूप से शासन करते हैं। मध्य प्रदेश व बरार का चीफ़ कमिश्नर

चीफ़ कमिश्नर

लेफ़्टिनेन्ट गवर्नर के प्रायः समान अधिकारी ही है। अब इस प्रान्त को व्यवस्थापक कौंसिल भी मिल गयी है।

प्रान्तिक कार्य्यकारिणी कौंसिल

बड़े प्रान्त का भार अकेले एक शासक के लिए बहुत भारी प्रतीत होता है; उसका उत्तरदायित्व दिनों दिन बढ़ता जाता है, इस लिए आवश्यक होता है कि उसकी सहायतार्थ एक कौंसिल दी जावे। इसके अतिरिक्त यह भी विचारणीय है कि यद्यपि यत्र तत्र कोई स्वाधीन राजा अच्छा हो सकता है, परन्तु साधारणतया उन्हीं राजाओं से प्रजा को विशेष लाभ पहुंचा है जिनके पास शासनार्थ सभाएं रहीं; क्योंकि स्वेच्छाचार का कार्य्य उनके व्यक्तित्व पर निर्भर रहता है। यदि वे विलक्षण-बुद्धि, राजनीतिज्ञ, विशेष कृपालु तथा उदार प्रकृति के हों, तो कोई चिन्ता की बात नहीं; यह भी सम्भव है कि ऐसे उत्तम शासकों के लिए कार्यकारिणी कौंसिल किसी किसी समय विघ्नकारी सिद्ध हो जावे। परन्तु सब शासक ऐसे ही नहीं होते, अथवा इस बात की कोई गारंटी नहीं है कि किसी प्रान्त को सदैव ही ऐसे योग्य शासक मिलते रहने का सौभाग्य रहेगा। इसलिए यह उचित है कि शासकों के कार्य्य की आलोचनार्थ कुछ पदाधिकारी नियत रहें, यद्यपि ख़ास हालतों में वर्तमान कौंसिलों के विरुद्ध भी शासक कार्य्य कर सकते हैं। परन्तु कौन कह सकता है कि उनके हर दम बाद विवाद और आलोचना के संदेह का शासकों की नीति पर कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता। हां, यह ज़रूर है कि इन कौंसिलों से विशेष लाभ उसी समय हो सकता है जब इनमें भारतीय मेम्बरों की संख्या यथेष्ट अर्थात् आधे से अधिक रहे। वर्तमान समय में प्रान्तिक कार्यकारिणी कौंसिलों के

३ मेम्बरों में से केवल १ भारतीय रहता है। और भारतीय बड़ी कौंसिल में तो यह निस्बत भी नहीं रहती, वहां ६ मेम्बरों में से केवल १ ही भारतीय है। आशा है कि भविष्य में इस विषय में अधिक उदारता से काम लिया जावेगा।

नोट—व्यवस्थापक कौंसिल का विषय आगामी स्वतंत्र अध्याय में रहेगा।

पञ्चम परिच्छेद

ज़िले का शासन

पहिले कह आये हैं कि शासन के लिए सरकारी भारत छोटे बड़े १५ प्रान्तों में विभक्त है। मद्रास को छोड़ प्रत्येक बड़े प्रान्त में चार पांच डिवीज़न (कमिश्नरी या क़िस्मत) रहते है। एक डिवीज़न की देख भाल करनेवाले को कमिश्नर कहते हैं। एक डिवीज़न में तीन, चार, पांच अथवा अधिक ज़िले होते है। ज़िलों से जो रिपोर्ट या पत्रादि स्थानीय सरकार के पास जाते हैं वे सब कमिश्नर के हाथों में से गुजरते हैं। कमिश्नर लोग सरकार की कार्य्यकारिणी कौंसिल के कर्मचारी नही होते; वे केवल जांच पड़ताल करते हैं। कुछ प्रान्तों में सरकार के काम में सहायता देने के लिए बोर्ड-मालगुज़ारी (Revenue-Board) रहता है। मद्रास प्रान्त में कमिश्नरों के काम के लिए भी चार कलेक्टरों का एक बोर्ड ही रहता है।

प्रान्तों के विभाग

अंग्रेज़ी भारत में शासन की इकाई जिला ही है। राज्य की कल

जैसी एक ज़िले में चलती दिखायी पड़ती है, वैसी ही प्रायः अन्य ज़िलों में भी है। जो अफसर एक में काम करते हैं, वे ही औरों में भी हैं। जनता के काम काज का मुख्य स्थान व लोक-व्यवहार का केन्द्र ज़िला है। जो मनुष्य अन्य प्रान्तों तथा दूसरे शहरों से कुछ सम्बन्ध नहीं रखते, उन्हें भी बहुधा ज़िले में काम पड़ जाता है। यहां की ही शासन-व्यवस्था को देख कर जनसाधारण समस्त देश के राज्य-प्रबन्ध का अनुमान किया करते हैं।

शासन व्यवस्था में ज़िले का स्थान

ज़िलों की कुल संख्या २६७ है। प्रत्येक ज़िला एक उत्तरदायी अफ़सर के अधीन रहता है, जिसे कलेक्टर (Collector) कहते हैं। (पंजाब, बर्मा, अवध और मध्य प्रान्तों में वह डिप्टी कमिश्नर कहलाता है)।

भारतवर्ष में ज़िलों का औसत क्षेत्रफल ४००० वर्ग मील के लगभग है, तथा उसकी औसत मनुष्य संख्या ६ लाख है। कोई ज़िला छोटा है, कोई बड़ा; इसी प्रकार कहीं की मनुष्य संख्या कम है, कहीं की बहुत अधिक। उदाहरणार्थ मद्रास में औसत क्षेत्रफल ६००० वर्ग मील और मनुष्य संख्या १५ लाख के लगभग है। संयुक्त प्रान्त में क्षेत्रफल यद्यपि साधारणतया २००० वर्ग मील से कुछ ही अधिक है, परन्तु मनुष्य संख्या की औसत १० लाख है। सबसे छोटा ज़िला शिमला है और सब से बड़ा ब्रह्मा में उत्तरीय चिन्दविन है। इनका क्षेत्रफल क्रमशः १०१ व १६००० वर्ग मील है। इन संख्याओं से इनका भेद समझ में आ सकता है।

ज़िले का क्षेत्रफल व मनुष्य-संख्या

इस भेद का कारण यह है कि ज़िलों की सीमा निश्चित

करने में वहां के क्षेत्रफल व मनुष्य-संख्या की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता; वरन् विचार यह करना होता है कि वहां के शासक को मालगुज़ारी तथा प्रवन्धादि का काम अन्य ज़िलों के शासकों के समान ही करना पड़े।

जिले की कार्य-कारिणी

ज़िले के कार्यकर्ताओं को कानून बनाने का अधिकार नहीं होता। इनका मुख्य काम यह है कि वे सरकार के बनाये कानून को व्यवहार में लावें, तथा उसकी आज्ञाओं का पालन करें। हां, कानून वनाने में अप्रकट रूप से इतना भाग इनका अवश्य रहता है कि इनकी रिपोर्टों के आधार पर सरकार स्थानीय परिस्थिति का अनुमान करती है और तदनुसार कानून बनाती है। ज़िले में अनेक प्रकार के कार्य करने होते हैं, यथा—

शान्ति रखना, झगड़ों का फैसला करना, मालगुजारी वसूल करना, सड़क पुल आदि बनवाना, अकाल में लोगों की सहायता करना, रोगियों का इलाज करना, म्युनिसिपल व लोकल बोर्डों की निगरानी रखना, जेलखाना व पाठशाला आदि का निरीक्षण करना, इत्यादि।

इन विविध कार्यों के लिए ज़िले में कई एक अफसर रहते हैं—जैसे पुलिस सुपरिंटेंडेंट, डिप्टी व सहायक कलेक्टर, डिस्ट्रिक्ट जज, मुंसिफ, एक्जैक्टिव इञ्जिनियर, सिविल सर्जन, जेल सुपरिंटेंडेंट तथा स्कूल इन्स्पेक्टर आदि। इनका विशेष उल्लेख अन्यत्र किया जायगा।

इन अफ़सरों में से ज़िला-जज प्रभृति सिविल अफ़सरों को छोड़ शेष सब पर कलेक्टर ही मुखिया होता है। इस लिए ज़िले के हाकिम से कलेक्टर ही का संकेत होता है।

शासन व्यवस्था में ज़िले का क्या स्थान है, यह समझने पर कलेक्टर के पद का महत्व सहज ही ध्यान में आ सकता है। ज़िले के लोगों के लिए यही सरकार का प्रतिनिधि है।

कलेक्टर के पद का महत्व

उच्च कर्मचारियों को वे भले ही न जानें, पर कलेक्टर से उन्हें दिन रात काम पड़ता है। इसी की योग्यता पर सरकार के उत्तम नियमों से प्रजा को यथेष्ट लाभ होना अथवा न होना निर्भर है और जैसा इसका बर्ताव रहता है, उसीसे अधिकांश जन-समाज सरकार की नीति का अन्दाज़ा लगाते हैं। जैसा कि आगे लिखे उसके कर्तव्यों से विदित होगा, वह केवल सरकार का हाथ मुंह ही नहीं, वरन् आंख कान भी है।

उसकी संयुक्त उपाधि 'कलेक्टर-मैजिस्ट्रेट' उसके डबल कार्य्य की बोधक है। कलेक्टर की हैसियत से वह ज़िले की मालगुजारी वसूल करता है और मैजिस्ट्रेट की हैसियत से वह ज़िले का शासन करता है। अपनी अमलदारी के भूमि-सम्बन्धी मामलों पर वह विचार करता है, सरकार और कृषकों के सम्बन्ध का वह ध्यान रखता है, और ज़मीदारों और किसानों के झगड़ों का वह फैसला देता है। दुर्भिक्ष अथवा अन्य आवश्यकता के समय कृषकों को सरकारी सहायता उसकी सम्मति अनुसार मिलती है। इसके अतिरिक्त स्थानीय आबकारी, इन्कम टैक्स, स्टाम्प ड्यूटी तथा आय के अन्य श्रोत भी उसीके सुपुर्द हैं। ज़िले के खज़ाने का वही उत्तरदाता है। उसे म्युनिसिपलटियों की निगरानी का अधिकार है और प्रायः वह एक या अधिक का अध्यक्ष भी रहता है। बहुधा ज़िला-बोर्डों का सभापति भी वही रहता

कलेक्टर के अधिकार व कर्तव्य

है। ज़िला-मैजिस्ट्रेट की हैसियत से उसे अव्वल दर्जे के मैजिस्ट्रेटी के अधिकार प्राप्त हैं, जिनसे वह दो साल की कैद और एक हजार रुपए तक का जुर्माना कर सकता है। प्रायः वह फौज़दारी के मुकद्दमों का फैसला नहीं करता, परन्तु ज़िले के अन्य मैजिस्ट्रेटों के काम की निगरानी करता है। ज़िले की सब प्रकार से सुख शान्ति का वही उत्तरदाता है। अपने अधीन पदाधिकारियों के विरुद्ध अपील वही सुनता है और स्थानीय पुलिस की निगरानी भी करता है। इस बात के निश्चय करने में कि कहां पुल, सड़क इत्यादि बनने चाहिए, कहां सफाई का प्रबन्ध होना चाहिए, तथा किन नगरों को सैल्फ गवर्मैंट मिलनी चाहिए, उसीकी सम्मति प्रामाणिक मानी जाती है। ज़िले में जो भी व्यवस्था ठीक न हो, उसका सुधार करना और हर एक बात की रिपोर्ट उच्च कर्मचारियों के पास भेजना उसीका कर्तव्य है। इस प्रकार इतने भिन्न प्रकार के कार्य उसके सुपुर्द हैं कि उन सबको स्वयं भली प्रकार चलाना बुद्धि-विलक्षणता ही का कार्य्य है। इसलिए बहुत से काम कलेक्टर के अधीन कर्मचारी ही कर डालते हैं और कलेक्टर केवल उनके कागजों पर हस्ताक्षर मात्र कर सकते हैं।

सिविल सर्विस परीक्षा

सिविल (मुल्की) पदों की सरकारी बड़ी बड़ी नौकरियां प्रायः उन्हींको मिल सकती हैं जो सिविल सर्विस (Civil Service) की परीक्षा पास कर चुके हों। यह परीक्षा हर साल लन्दन में होती है और इसमें ब्रिटिश राज्य में रहनेवाला किसी भी देश जाति व धर्म का मनुष्य बैठ सकता है जो नेक चलनी का प्रमाण दे चुका हो। हिन्दुस्तानी लोगों के लिए

भी यह परीक्षा बन्द नहीं की हुई है; परन्तु उन्हें उच्च पद की नौकरिएं बहुत कम मिली हैं; इसका कारण यह है कि इतना धन व्यय कर दूर देश में जा अभ्यास करना इनके लिए महा कठिन है। यह प्रश्न वारम्बार सरकार के सामने रक्खा जा चुका है कि यह परीक्षा इंगलैंड के अतिरिक्त हिन्दुस्तान में भी हुआ करे जिससे परिक्षोत्तीर्ण होने में हिन्दुस्तानियों को समान अवसर मिले। परीक्षार्थ इंगलैंड जाने से बहुतेरे तो अपनी जीवनपरीक्षा में ही फेल हो बैठे हैं:—अनेक कष्ट सह कर तो वहां गये, फिर यदि परीक्षा में नम्बर न आया तो 'धोबी का कुत्ता न घर का न घाट का' यह उक्ति चरितार्थ होती है। उनकी अभिलषित् नौकरी तो उन्हें वैसे नहीं मिल सकती और बहुत धन खर्च होने अथवा अमूल्य समय व्यतीत हो जाने से अन्य व्यवसाय भी उनके लिए कठिन हो जाता है। फिर वापिस घर लौटने पर जो 'प्रायश्चित्त अथवा जाति बिरादरी से बाहर' की फटकार मिलती है सो रही अलग।

यद्यपि पार्लिमेंट के एक ऐक्ट से यह अधिकार मिल गया है कि बिना उक्त परीक्षा पास किये भी कुछ हिन्दुस्तानी योग्यता व चतुराई का प्रमाण देने पर उच्च पदों पर नियत किये जा सकें: परन्तु रियायत से भी यथेष्ट कल्याण नहीं हो पाया है और न होवेहीगा। यथोचित् मीमांसा यही है कि परीक्षा दोनों जगह हो—इंगलैंड में भी और हिन्दुस्तान में भी: जिसे जहां सुभीता हो वह वहां उसमें बैठे। सरकार यह प्रार्थना कब स्वीकार करेगी, यह उसकी उदारता पर निर्भर है।

हम कलेक्टर के कर्तव्यों में यह बता आये हैं कि उसे ज़िले के शासन के साथ अनेक स्थानों में न्याय का भी काम करना

होताहै। अब २०वीं शताब्दी में यह सिद्धान्त सर्वत्र बुद्धिमानों

शासन व न्याय विभाग का पृथक्करण

द्वारा स्वीकृत हो चुका है कि ये दोनों कार्य एक ही व्यक्ति से सुचारुरूप से नहीं हो सकते और समस्त सभ्य देशों में यह दोनों कार्य्य भिन्न भिन्न व्यक्तियों के सुपुर्द रहते है। भारत-सरकार भी उक्त सिद्धान्त को अस्वीकार नहीं करती। परन्तु इसे कार्य-रूप में लाने में अपनी असमर्थता प्रगट करती है। अस्तु इस विषय पर बहुत आन्दोलन हो चुका है—सरकार की ओर से की हुई सब आपत्तियो का एक एक करके उत्तर दिया जा चुका है और अब आवश्यक है कि शीघ्र ही सरकार इस सत्य सिद्धान्त को कार्य रूप में ला अपने सत्य-प्रेम तथा न्यायनिष्ठा का परिचय दे।

प्रायः प्रत्येक ज़िले के कुछ विभाग किये होते हैं जिन्हें

जिले के भाग—तहसील व गाव

सब-डिवीज़न कहते हैं। अपनी अपनी अमलदारी में सब-डिवीज़नों के अफ़सरों के अधिकार थोड़े बहुत भेद से कलक्टर-मैजिस्ट्रेटों सरीखे ही होते है। बंगाल प्रान्त को छोड़ अन्य स्थानों में प्रत्येक ज़िले के अन्तर्गत ५, ६ तहसीलें ठहरायी गयी है जो प्रायः देशी अफ़सरों के हाथ मे होती हैं। तहसीलदार मानो प्रजा और सरकार के बीच मध्यस्थरूप है। उसका काम है कि दोनों को एक दूसरे के विषय में आवश्यकीय सूचना देता रहे। वह केवल तहसील भर के माल व फ़ौज़दारी के ही काम का उत्तरदाता नहीं है, वरन् म्युनिसिपलिटियों और देहाती बोर्डों में भी यथोचित सेवा करना उसका कर्तव्य है। एक तहसील में दो सौ, ढाई सौ गांव रहते है। जिस प्रकार ज़िले से ऊपर की सीढ़िएं क्रमशः डिवीज़न, (चीफ कमिश्नरी) और प्रान्त है,

उसी प्रकार ज़िले से नीचे की सीढ़िएं तहसील और गांव हैं। गांव में प्रायः निम्नलिखित कर्मचारी रहते हैं।

१—पटवारी

पटवारी गांव के किसानों व जमिंदारों के हक़ हकूक के काग़ज़ों को सरकार की ओर से रखता है और प्रत्येक छोटे बड़े परिवर्तन की रिपोर्ट सरकार में कर 'खेवट' 'खतौनी' आदि को ठीक रखता है।

२—लम्बरदार

लम्बरदार का काम गांव का लगान तथा मालगुज़ारी व आवयाना एकत्र करके तहसील में भेज देना है जहां से वह ज़िले में चला जाता है। लम्बरदार की साक्षी बड़ी प्रामाणिक समझी जाती है।

३—चौकीदार

चौकीदार गांव में पहरा देने व चौकसी करने के लिए नियत रहते हैं। ये मृत्यु एवं नवजात वालकों की ख़बर भी रखते हैं।

४—मुखिया

मुखिया चौकीदारों का अफ़सर एवं पुलिस का प्रतिनिधि है और पुलिस को ऐसे मामलों की सूचना देता रहता है जिनमें उसको हस्तक्षेप करने का अधिकार हो। छोटे मोटे मामलों का तो यह स्वयं ही फैसला कर देता है। गांव में जिन पशुओं का क्रय विक्रय होता है उनका हुलिया लिखना भी इसीका काम है।

षष्ठ परिच्छेद

व्यवस्थापक सभा (Legislative Council)

भारतीय बड़ी (Imperial) व्यवस्थापक सभा उस कानून को बनानेवाली तथा उन प्रश्नों पर विचार करनेवाली

सभा है जिनका सम्बन्ध समस्त अंग्रेज़ी भारत से हो। इसका

भारतीय बड़ी व्यवस्थापक सभा

वर्तमान रूप भली भांति समझने के लिए पहिले इसका संक्षिप्त इतिहास जान लेना उचित होगा।

व्यवस्थापक सभा का संक्षिप्त इतिहास

जन्म

सन् १८३३ ई० से पहिले नियमित रूप से कोई व्यवस्थापक सभा न थी। इसका काम कार्यकारिणी अर्थात् शासन सभा के ही सुपुर्द था, और दोनों के संगठन में कोई भेद न था। बंगाल, मद्रास व बम्बई की गवर्नमेंटों को अधिकार था कि अपने अपने प्रान्तो के लिए आवश्यकीय नियम बना लिया करें। इस प्रकार तीन प्रान्तों में भिन्न भिन्न नियम-संग्रह से काम चलता रहा। यह नियम-विभिन्नता सन् १८३३ ई० मे दूर की गयी। उस समय के ऐक्ट से नियम बनाने का अधिकार एक मात्र गवर्नर-जनरल की ही कौंसिल को रह गया। उसमें एक मेम्बर और नियत किया गया जो केवल नियम बनाने के समय ही उसमे बैठ सकता था, अर्थात् दूसरे समय जब वह कौंसिल कार्यकारिणी की हैसियत से बैठती थी, इसे कुछ अधिकार न होता था। इस प्रकार यह पहला कानूनी सलाहकार ठहरा, और सन् १८३३ ई० में व्यस्थापक सभा की बुनियाद पड़ी।

प्रथम परिवर्तन

जब से कि सन् १८३३ ई० में नियत किये हुए कानूनी सलाहकार को कार्यकारिणी कौंसिल के अन्य मेम्बरों के समान अधिकार दिये गये और वह उसमें बैठने व सम्मति देने लगा, इस सभा के इतिहास में पहिला परिवर्तनकाल सन् १८५३ ई० है। साथ ही

इस समय व्यवस्था (कानून बनाने) के लिए ६ और मेम्बर बढ़ाये गये—बंगाल का चीफ जस्टिस, सुपरीम कोर्ट (बड़ी अदालत) का एक और जज तथा कम्पनी के चार ऐसे कर्मचारी जिन्होंने दस वर्ष भारतवर्ष में काम किया हो और जिन्हें मद्रास बम्बई, बंगाल और पश्चिमोत्तर प्रदेश की प्रान्तिक गवर्मेंट नियत करें। इस प्रकार भारतीय बड़ी व्यवस्थापक सभा के मेम्बरों की संख्या दस हो गयी—४ तो कार्यकारिणी वाले और ६ अन्य सभासद थे।

द्वितीय परिवर्तन

सन् १८६१ ई० के ऐक्ट से इस सभा ने और आगे क़दम बढ़ाया। अब अधिक मेम्बरों की संख्या १२ तक हो सकती थी। ग़ैरसरकारी मेम्बर भी नियत होने लगे, और यह नियम हो गया कि इनकी संख्या आधी से कम न रहे। एवं जिस स्थान में व्यवस्थापक सभा का अधिवेशन हो, वहां के प्रान्तिक शासक को भी अधिक मेम्बर के अधिकार प्राप्त हुए।

तृतीय परिवर्तन

सन् १८९२ ई० के ऐक्ट से यह परिवर्तन हुआ कि अधिक मेम्बरों की संख्या १२ से बढ़ा कर १६ कर कर दी गयी और मेम्बरों की नियुक्ति में चुनाव के सिद्धान्त को स्थान दिया गया। नियुक्ति का ढंग पहिले की भांति अब भी यही रहा कि गवर्नर-जनरल मेम्बरों को नामज़द करें; परन्तु अब यह नियम हो गया था कि कुछ मेम्बर विशेष निर्वाक-समितियों की सिफारिश से नामज़द किये जावें।

वर्तमान रूप

सन् १९०९ ई० के ऐक्ट तथा सन् १९१२ ई० के थोड़े से परिवर्तन से भारतीय बड़ी व्यस्थापक सभा को वर्तमान रूप दिया गया। अब ८ साधारण मेम्बरों के अतिरिक्त इसमें ६० अधिक मेम्बर हैं, ३३

नामज़द किये हुए तथा २७ चुने हुए, जिनकी व्याख्या आगे दिये हुए नक़शे से होगी।

(Ex-officio)

गवर्नर-जनरल की कौंसिल के साधारण मेम्बर	६
कमांडर-इन-चीफ (जंगी लाट)	१
जहां कौंसिल का अधिवेशन हो, वहां का प्रान्तिक शासक (लैफ्टिनेंट गवर्नर या चीफ कमिश्नर)	१
	८

अधिक (Additional) मेम्बर

नामज़द—जिनमें २८ से अधिक सरकारी न हों, (इनमें ९ सरकारी मेम्बर प्रान्तों की ओर से होंगे)।	२८
और गैर सरकारी (१ पंजाब की मुसलमानों की ओर से; १ पंजाब के जागीरदारों की ओर से, और १ भारतीय व्यापारिक जनता की ओर से)	३
विशेषज्ञ, अथवा क्षुद्र साम्प्रदायिक हितार्थ	२
	३३

चुने हुए

(क) प्रान्तिक व्यवस्थापक सभाओं से	१३
(ख) मद्रास, बम्बई, बंगाल, संयुक्त प्रान्त, विहार व उड़ीसा और मध्य प्रान्त के जागीरदारों से एक एक	६
(ग) मद्रास, बम्बई, बंगाल, संयुक्त प्रान्त, विहार व उड़ीसा के मुसलमानों से एक एक	५

(घ)	क्रमशः एक बार संयुक्त प्रान्त के मुसलमान जागीरदारों से और एक बार बंगाल के मुसलमानों से	१
(ङ)	कलकत्ते और बम्बई की चेम्बर आफ कामर्स से	२
	जोड़	२७
		६८
	अथवा गवर्नर-जनरल को मिला कर	६९

भारतीय बड़ी व्यवस्थापक सभा का कार्य्यक्षेत्र

इसके दो काम हैं (१) कानून बनाने का (२) सामयिक प्रश्नों पर विचार।

१—कानून सम्बन्धी

सन् १८६१ ई० के ऐक्ट से यह कौंसिल अंग्रेज़ी भारत के सब स्थान व सब विषयों सम्बन्धी कानून बना सकती है। परन्तु वह ब्रिटिश पार्लिमेंट के उन ऐक्टों के सम्बन्ध में कुछ नियम नहीं बना सकती जिनके आधार पर भारतवर्ष की राज्यप्रणाली स्थिर हुई है और न वह सम्राट की आज्ञा के विषय में कोई नियम बना सकती। प्रत्येक नियम के बनाये जाने में गवर्नर-जनरल के सहमत होने की आवश्यकता है। किसी नियम का युक्ति संगत होने (Validity) के विषय में क्राउन (Crown) के सहमत होने की आवश्यकता नहीं है, परन्तु क्राउन किसी भी पास किये हुए नियम को रद्द कर सकता है। गवर्मेंट की यह नीति रहती है कि भारतवर्ष के किसी जाति के सामाजिक अथवा धार्मिक नियमों में दखल न दे।

गवर्नर-जनरल के अधिकार

सन् १८७० के ऐक्ट से कौंसिल-युक्त गवर्नर-जनरल (Governer General in Council) को यह अधिकार मिल गया है कि वह

'अधिक' मेम्बरों के विना भी किसी कम उन्नत प्रान्त के लिए नियम बना सके। और सन् १८६१ ई० के ऐक्ट् की एक धारा से आवश्यकता होने पर विना कौंसिल ही वह ऐसा नियम बना सकता है जो ६ मास तक कानून की भांति व्यवहृत हो सके। ऐसे नियम को आर्डिनैंस (Ordinance) कहते हैं।

२ सामयिक प्रश्नों पर विचार

यह कौंसिल भारतवर्ष के वार्षिक बजट (आय व्यय के अनुमान) पर वाद विवाद कर सकती है। यदि कोई मेम्बर बजट के किसी भाग में दोष दिखलावे तो अर्थ-सचिव (Finance Member) उसका उत्तर देंगे। यह सब वक्तृताएं समय समय पर प्रकाशित होती रहती हैं जिससे पब्लिक को यह जानने का अवसर मिले कि देश से क्या आय हुई तथा वह किस प्रकार से व्यय की गयी।

इस कौंसिल के मेम्बर सर्वसाधारण के उपयोगी प्रश्न पूछ सकते हैं और उसके उत्तर मिलने पर परिशिष्ट रूप से और भी प्रश्न कर सकते है यदि ऐसा करने से पहिले प्रश्न के उत्तर पर अधिक प्रकाश पड़ता हो। इन प्रश्नों के विषय में कुछ निश्चित काल पहिले सूचना देनी होती है और प्रश्न निवेदन-रूप में करना होता है। यदि उक्त प्रश्न का उत्तर सभापति (गवर्नर-जनरल या गवर्नर) की सम्मति से सार्वजनिक हित का न हो तो वह उसे पूछे जाने से रोक सकता है।

प्रान्तिक व्यवस्थापक सभाएं

सन् १८६१ ई० के ऐक्ट् से बम्बई और मद्रास की

गवर्मेंटों को पुनः कानून बनाने का वह अधिकार दिया गया जो उनसे सन् १८३३ ई० में ले लिया गया था। इसी प्रयोजन से उनकी कार्यकारिणी सभा के मेम्बरों की संख्या बढ़ायी गयी। उनमें वहां का ऐडवोकेट जनरल (Advocate General) तथा गवर्मेंट द्वारा नामज़द दूसरे मेम्बरों को शामिल करने का अधिकार दिया गया जिनकी संख्या ४ से कम और ८ से अधिक न रहे और यह नियम किया गया कि इनमें ग़ैरसरकारी मेम्बरों की संख्या आधी से कम न रहे।

उनका प्रादुर्भाव
बम्बई-मद्रास

उक्त सन् १८६१ ई० के ही ऐक्ट से कौंसिल-युक्त गवर्नर-जनरल को इस बात की अनुमति मिली कि बंगाल में व्यवस्थापक सभा बनावें एवं अन्य प्रान्तों में भी आवश्यकतानुसार यथा-समय व्यवस्थापक सभाएं बना दे। वह ऐक्ट निम्न-लिखित प्रकार से कार्य-रूप में आया--

प्रान्त	समय	आरम्भ मे मेम्बरो की सख्या
बंगाल	१८६२	२३
संयुक्त प्रान्त	१८८६	१५
पंजाब	१८९८	९
बर्मा	"	९
पूर्वी बंगाल और आसाम	१९०५	१५
मध्य प्रान्त	१९१३	१४

वर्तमान समय में प्रान्तिक व्यवस्थापक सभाओं की स्थिती

	(कार्यकारिणी के मेम्बरों सहित) सब सरकारी मेम्बर	गैर-सरकारी		जोड़
		चुने हुए	नामज़द	
मद्रास	२०	२१	५	४६
बम्बई	१८	२१	७	४६
बंगाल	१६	२८	४	४५
संयुक्त प्रान्त	२०	२१	६	४७
पंजाब	१०	८	६	२४
बर्मा	६	१	८	१५
बिहार-उड़ीसा	१८	२१	४	४३
आसाम	९	११	४	२४
मध्य प्रान्त	१०	७	७	२४

इन संख्याओं में प्रान्तिक शासक शामिल नहीं है और न विशेषज्ञों (Experts) की संख्या सम्मिलित है जिनको शासक आवश्यकतानुसार एक अथवा दो नियत कर सकते है। ये विशेषज्ञ सरकारी भी हो सकते है और ग़ैरसरकारी भी।

अधिकार

कानून बनाने, प्रश्न पूछने तथा बजट के विषय में इन कौंसिलों को अपने अपने प्रान्त के लिए साधारणतया वेही अधिकार प्राप्त है जो भारतीय बड़ी व्यवस्थापक सभा को समस्त भारतवर्ष के

बारे में है और जिनका उल्लेख ऊपर हो चुका है। इन कौंसिलों में ऐसे प्रश्नों पर विचार नहीं हो सकता जिनका सम्बन्ध राजकीय ऋण (Public debt), सरकारी टैक्स, करैंसी, डाक, दंड संग्रह, फौज की क़वायद, सरकार का देसी रियासतों से बर्ताव और भारतवर्ष की प्रजा के धर्म से हो।

बड़ी व्यवस्थापक सभा और प्रान्तिक सभाओं में बड़ा भेद केवल यह है कि प्रान्तिक कौंसिलों में सरकारी मेम्बरों की (ग़ैरसरकारी मेम्बरों की अपेक्षा) अधिकता नहीं रहती जिसका कि बड़ी व्यवस्थापक सभा में रखना आवश्यकीय समझा गया है।

सप्तम परिच्छेद

स्थानीय स्वराज्य

(Local Self-Government)

बड़े देश में शासन सम्बन्धी कार्य इतना अधिक होता है कि उसमें वहां के निवासियों की सहायता लेना ही बुद्धिमत्ता है। इसके अतिरिक्त सभ्य साम्राज्यों का यह उद्देश्य रहता है कि अपने अधीन राज्यों को स्वराज्य करना सिखावें। भारत सरकार लोगों को स्थानीय राज काज के ऐसे अधिकार देती है जिनके कि वह उन्हें योग्य समझती है। इसीको स्थानीय स्वराज्य कहा जाता है। इसके दो भेद हैं—

१—नगरों में म्यूनिसिपलिटिएं।

२—ग्रामों में देहाती बोर्ड (Rural Board).

म्यूनिसिपलटिएं

उद्देश्य

इनके दो उद्देश्य होते हैं, प्रथम यह है कि नगर का सुधार व नागरिकों की उन्नति करना। दूसरा उद्देश्य यह है कि लोगों को राज्य-प्रबन्ध की शिक्षा मिले और वे आत्मावलम्बन सीखें। पहिला उद्देश्य लार्ड मेओ ने सन् १८७० ई० के मन्तव्य में प्रगट किया था और दूसरा रिपन महोदय ने सन् १८८४ ई० में दर्शाया था। उन्होंने लिखा था कि यदि आरम्भ में भूल चूक हो और मनोरथ सफ़ल न हो तो भी निराश होने की आवश्यकता नहीं, ज्यों ज्यों अनुभव बढ़ेगा त्यों त्यों इस महान उद्देश्य की अधिकाधिक पूर्त्ति होती रहेगी।

इन महाशय की स्कीम की मुख्य बातें इस प्रकार हैं—

लार्ड रिपन की स्कीम

१—म्यूनिसिपल बोर्डों के अतिरिक्त देहातों में स्थान स्थान पर लोकल बोर्ड स्थापित किये जावें, और इनमें से किसी का क्षेत्रफल इतना अधिक न हो कि उसके मेम्बर समस्त आवश्यकीय बातों की जानकारी न रख सकें।

२—सब बोर्डों में (शहरी हों या देहाती) ग़ैर-सरकारी मेम्बरों की अधिकता रहे।

३—लोकल गवर्मेंट की समझ में जहां जहां सम्भव हो मेम्बर चुनाव से नियत हों।

४—समय समय पर ज़मीन के महसूल आदि के मामलों का निपटारा करने के लिए ज़िला बोर्ड की सभा हुआ करे।

५—सरकारी दबाव ऊपर से रहे, अर्थात् सरकारी मेम्बर वाद विवाद के समय निर्वाचित मेम्बरों के कार्यों में बाधा न डाल सकें; हां, इन बोर्डों के कार्य की देखभाल सरकारी कर्म्मचारी कर लिया करें।

स्थानीय स्थिति सर्वत्र एक समान न होने से उपर्युक्त नियमों को स्थिति-भेदानुसार भिन्न भिन्न रूप से कार्यों में लाना प्रारम्भ किया गया।

संक्षिप्त इतिहास

सन् १८४२ ई० तक कोई म्यूनिसिपलटी स्थापित न की गयी थी। उस वर्ष एक ऐक्ट् बंगाल में म्यूनिसिपलटियां स्थापित करने के विचार से बनाया गया, परन्तु उससे कोई सफलता प्राप्त न हुई। सन् १८५० ई० में समस्त भारत के लिए ऐक्ट् पास किया गया, जिससे समस्त प्रान्तीय सरकारों को यह अधिकार मिल गया कि जहां जनता की रुचि हो, सड़कें बनाने व सुधारने, रोशनी अथवा अन्य प्रकार से नगर की उन्नति के हेतु म्यूनिसिपलटियों को स्थापित कर सकें। इसी ऐक्ट् से मकान तथा अन्य प्रकार के माल पर टैक्स लगाया जा सकता था। इस प्रकार भारतवर्ष में चुंगी की प्रणाली आरम्भ हुई॥

बीस वर्ष तक म्यूनिसिपलटियों का विशेष विस्तार न हुआ। कलकत्ता, मद्रास, बम्बई के नगरों के अतिरिक्त उक्त ऐक्ट् केवल पश्चिमोत्तर प्रदेश और बम्बई प्रान्त में ही काम में लाया गया।

सन् १८७० ई० में कुछ वास्तविक उन्नति लार्ड मेओ के समय में हुई। पश्चात् चुनाव के सिद्धान्त का प्रचार हुआ।

परन्तु अधिकांश में म्यूनिसिपलटिएं सरकारी कर्मचारियों के ही अधीन रहीं। विशेष उन्नति सन् १८८४ ई० में हुई जब कि लार्ड रिपन ने म्यूनिसिपलटियो के अधिकार बढ़ाये और उन पर सरकारी दबाव कम किया। उस वर्ष के ऐक्ट से ऐसा नियम किया गया कि म्यूनिसिपलटियों के आधे मेम्बर चुने जांय और शेष के भी आधे से अधिक सरकारी वेतन पाने वाले न हों। सभापति मेम्बरों द्वारा भी चुना जा सकता था और सरकार भी नियत कर सकती थी। यदि वह सरकार द्वारा नियत हो तो उपसभापति चुनने का अधिकार मेम्बरों को रहे।

सन् १६०१ ई० में शहरों की म्यूनिसिपलटियों को (जहां १५००० की या इससे अधिक जनसंख्या हो) एक प्रबन्ध-सम्बन्धी अधिकार रखनेवाले प्रधान कर्म्मचारी, एक इंजिनियर, एक सफाई का डाक्टर (Health Officer) के रखने की अनुमति दी गयी। सन् १६०६ ई० में सरकार ने कितनी ही म्यूनिसिपलटियों को ग़ैरसरकारी सभापति चुनने का अधिकार दे दिया। तथा कुछ शहरों की म्यूनिसिपलटियों को यह भी अधिकार दिया कि यदि वे प्रबन्ध-सम्बन्धी अधिकार रखनेवाला किसी सरकारी कर्म्मचारी को रखने पर सहमत हों तो वे दो तिहाई मेम्बर चुन सकें। यह अधिकार पीछे कुछ औरों को भी दिये गये और जिन्होंने इनका दुरुपयोग किया उनके लिए कड़ी व्यवस्था की गयी।

लगे हुए नकशे से भिन्न भिन्न प्रान्तों की म्यूनिसिपलटियों की संख्या तथा उनका संगठन विदित होगा।

	म्यूनिसिपलटियों की संख्या	मेम्बरों की संख्या	Qualification गुण			Employment काम		जाति	
			Ex-officio	नामज़द	चुने हुए	सरकारी	ग़ैर सरकारी	यूरोपियन	देशी
कलकत्ता	१	५०	..	२५	२५	५	४५	२१	२९
बम्बई	१	७२	...	१६	५६	६	६६	१७	५५
मदरास	१	३६	१	१५	२०	४	३२	१२	२४
रंगून	१	२५	...	६	१९	५	२०	१३	१२
ज़िले की म्यूनिसिपलटियां									
बंगाल (कलकत्ता छोड़कर)	१११	१५१३	९८	५५४	८६१	१७८	१३३५	१५६	१३५७
बिहार और उड़ीसा	५४	७७६	९६	२७४	४०८	१३४	६४२	१३२	६४४
आसाम	१६	१६७	३४	७७	५६	४८	११३	३७	१३०
संयुक्त प्रान्त	८७	११८५	९३	१९२	९००	१९५	९९०	१४२	१०४३

पंजाब	१०७	१२२४	२२२	४३६	५६६	२५३	९७१	१०३	११२१
पश्चिमोत्तर सीमा प्रदेश	६	११६	३५	८१	...	३५	८१	१८	९८
मध्य प्रान्त और बरार	५६	७५८	२१	२५७	४८०	१५७	६०१	२७	६८६
बरमा (रंगून छोड़ कर)	४५	५७०	१७७	२९७	९६	१९४	३७६	१६१	४०९
बम्बई (शहर छोड़ कर)	६१	८९६	७१	३७६	४४९	१६८	७२८	१३४	७६२
मद्रास "	१५८	२१३०	३८७	८३०	९१३	४५७	१६७३	१३७	१९९३
कुर्ग	५	५१	१८	२४	९	१९	३२	८	४३
अजमेर-मेरवाड़ा	३	५३	६	१५	३२	९	४४	८	४५
ब्रिटिश बिलोचिस्तान	१	२०	६	१४	८	८	१२	८	१२
योगफल	७१४*	९६४२	१३६२	३३९०	१८९०	१८५७	७७५८	११७९	८४६०

* म्यूनिसिपलटियों की यह संख्या सन् १९११-१२ ई० की है। जब यह मालुम हुआ कि सन् १९०१-२ ई० में उक्त संख्या अधिक थी तो बहुत आश्चर्य हुआ, क्योंकि भारतवर्ष में दिनों दिन स्थानीय स्वराज्य बढ़ने का अनुमान था।

म्यूनिसिपलटियों के काम

१—सड़कें बनवाना, उनकी मरम्मत करवाना, गली कूचों सड़कों की सफ़ाई और रोशनी का प्रबन्ध करना, पब्लिक और म्यूनिसिपलटी के मकानात बनाना।

२—पब्लिक के स्वास्थ्य का ध्यान रखना, विशेषतया औषध-शास्त्र के नियमानुसार चेचक और प्लेग के टीके और मैले पानी के बहने का प्रबन्ध कराना और छूत की बीमारियों को बन्द करने के लिए उचित उपाय काम में लाना।

३—शिक्षा, विशेष कर प्रारम्भिक शिक्षा का समुचित प्रबन्ध करना।

अकाल के निवारणार्थ प्रयत्न करना भी इनका काम है।

आमदनी के श्रोत

क—चुंगी (अधिकतर उत्तर हिन्दुस्तान, बम्बई व मध्य प्रान्त में)।

ख—मकान और ज़मीन पर टैक्स (मदरास, बम्बई, बंगाल, मध्य प्रान्त में)।

ग—व्यापार धंधों पर टैक्स (मदरास और संयुक्त प्रान्त में)।

घ—सड़क पर महसूल (मदरास, बम्बई व आसाम में)।

ङ—गाड़ियों तथा अन्य सवारियों पर, अर्थात् एक्का, बग्गी, साइकिल, मोटर आदि पर टैक्स।

च—सफ़ाई बाज़ार, जल प्रबन्ध (नल आदि) पर महसूल, स्कूल फ़ीस, तथा पशुओं पर टैक्स।

सन् १९११–१९१२ ई० में सरकारी भारत में म्यूनिसिपलटियों की आय की औसत फ़ी आदमी ३) रु० के लगभग

हुई है। अहाते के शहरों (कलकत्ता, मद्रास, वम्बई) में यह औसत अधिक है। उन्हें यदि छोड़ दिया जाय तो भिन्न भिन्न प्रान्तों में म्यूनिसिपलटियों की आय की औसत फी आदमी निम्नलिखित के बीच बीच में होती है—

म्यूनिसिपलटियों की आय

	रु०	आ०
पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्त	३	१
पंजाब	२	६
मद्रास	१	६
कुर्ग	१	०

उक्त वर्ष में म्यूनिसिपलटियों की समस्त आय ७ करोड़ रुपए हुई तथा उन्होंने सवा सात करोड़ रुपए ख़र्च किये। उन पर १४ करोड़ रुपया ऋण चढ़ा हुआ है जिसका विशेष भाग वम्बई और कलकत्ते मे ख़र्च हुआ।

सरकारी सहायता

सरकार की ओर से म्यूनिसिपलटियों के लिए कोई वार्षिक देनगी नियत नही है: हां, कुछ प्रान्तों के शिक्षा, अस्पताल व पशु-चिकित्सा के कार्य में आवश्यकता होने पर प्रान्तिक सरकार आर्थिक सहायता देती है। इसी प्रकार जब किसी म्यूनिसिपलटी को मैले पानी के बहाव के लिए नालियां बनानी होती हैं, अथवा जल-प्रबन्ध का ऐसा कार्य करना होता है जो उसके संचित धन से न हो सके, तो प्रादेशिक सरकार उसके ख़र्च मे हाथ वटाती है। कभी कभी भारत सरकार प्रान्तिक सरकारो को म्यूनिसिपलटियो के निमित्त ख़ास रक़म प्रदान करती है।

सरकारी आज्ञा बिना म्यूनिसिपलटिएं अपने टैक्स नहीं बढ़ा सकतीं और बम्बई के अतिरिक्त अन्य सब प्रान्तों में उन्हें अपने बजट की भी स्वीकृति प्रान्तिक सरकार से लेनी पड़ती है, नौकरों की नियुक्ति में भी उन्हें बहुत कम अधिकार प्राप्त हैं। यह बात स्पष्ट है कि म्यूनिसिपलटियों के इन संकुचित आर्थिक अधिकारों से उनका यथेष्ट उद्देश्य पूर्ण नहीं हो पाता और उन्हें अधिक स्वतंत्रता मिलनी चाहिए। इस सम्बन्ध में कर्त्तव्यनिर्धारण करने का अधिकार भारत-सरकार ने प्रादेशिक सरकारों को दे दिया है, यद्यपि उसका अपना मत म्यूनिसिपलटियों को अधिक स्वतंत्रता देने के पक्ष में है।

संगठन

म्यूनिसिपलटियों में चुने हुए मेम्बरों की संख्या आधे से दो तिहाई तक है और इस निस्बत को बढ़ाने की ही प्रवृत्ति है। केवल पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्त में चुने हुए मेम्बर नहीं हैं और बरमा में आधे से बहुत कम हैं।

मेम्बर चुनने का अधिकार नगर के प्रत्येक टैक्स देने वाले को होता है जो निर्धारित अवस्था से कम का न हो तथा जिसमें विद्या और जागीर के निश्चित गुण हों। हाल में छोटे छोटे सम्प्रदायों को विशेष अधिकार दिये गये हैं। सभापति चार प्रकार के होते हैं। प्रथम स्वतंत्र लोक निर्वाचित व ग़ैरसरकारी, द्वितीय निर्वाचित परन्तु सरकारी, तृतीय सरकार द्वारा नियुक्त स्वतंत्र, चतुर्थ सरकार द्वारा नियुक्त तथा सरकारी कर्म्मचारी। इनमें से द्वितीय व तृतीय श्रेणियों का शीघ्र लोप हो जाना चाहिए। प्रथम तो जहां तक हो सके सभापति सब स्वतंत्र, बेसरकारी, लोक-

निर्वाचित रहने चाहिएं· यदि सरकार नियुक्त करना आवश्यक ही समझे तो किसी सरकारी कर्मचारी को नियत कर दे। वीच की श्रेणियों से न प्रजा का कल्याण होता और न सरकार को ही संतोष होता है।

आदर्श म्यूनिसिपलटी

सरकार के मत से वम्बई कारपोरेशन (Corporation) का संगठन आदर्श है, इसलिए इसका कुछ उल्लेख उचित जान पड़ता है। वर्तमान समय मे इसमे ७२ सलाहकार रहते हैं जिनमें से ३६ वार्डों (Wards) अर्थात् हल्कों से चुने हुए रहते हैं; १६ जस्टिस आफ दी पीस (Justice of the Peace), दो विश्वविद्यालय के फेलो (Fellows) से और दो वम्बई-व्यापार-समिति (Chamber of Commerce) से चुने हुए होते हैं, एवं शेष १६ सरकार द्वारा नियुक्त किये जाते हैं। सभापति सलाहकारों द्वारा चुना जाता है: और उसका प्रवन्धादि से कुछ सम्वन्ध नहीं रहता। इस कार्य के लिए सरकार की ओर से नियुक्त म्युनिसिपल कमिश्नर रहता है। यह कर्मचारी साधारणतया 'इंडियन सिविल सर्विस' का मेम्वर होता है और म्युनिसिपलटी की ओर से वेतन पाता है, जिससे वह अपना सारा समय उसीके काम में लगा सके। उक्त व्यवस्था ठीक ही है, पर उसमे भी एक दोष है। जव प्रवन्धकर्ता को वेतन म्यूनिसिपलटी देती है तो उसे ही उसकी नियुक्ति का भी अधिकार होना चाहिए। इस दोष को हटा कर यह प्रणाली प्रचलित होनी चाहिए।

मेम्वरों का उत्तरदायित्व

म्यूनिसिपलटी के मेम्वर राज्य की ओर से अधिकार पाकर स्थानीय शासन प्रवन्ध मे हिस्सा लेते है। इस स्थानीय

स्वराज्य से जनता का सच्चा हित तभी हो सकता है जब वे अपने उत्तरदायित्व को समझते हुए दिल से काम करें। बहुत स्थानों में देखा जाता है कि जब चुनाव का समय निकट आता है तो मेम्बरी के उम्मेदवार लोगों की खुशामदें करते फिरते हैं, दावतें देते हैं और हजारों रुपया व्यय कर डालते हैं। परन्तु जब वे मेम्बर चुन लिये जाते हैं तो फिर किसी बात की सुध नहीं रखते, अपने कर्त्तव्य से नितान्त विमुख होकर, सरकारी कर्म्मचारियों की हां में हां मिला कर वाह वाह ही लूटा करते हैं; वे इस बात का ध्यान नहीं रखते कि प्रजा के हित किस बात में हैं। यही कारण है कि स्थानीय स्वराज्य का यथोचित उद्देश्य पूरा नहीं हो पाता। जनता को चाहिए कि वे किसी मेम्बर के पक्ष में अपना मत केवल इसलिए न प्रगट करें कि वह उससे व्यक्तिगत सम्बन्ध रखता है अथवा वह चापलूसी में सिद्धहस्त है। वे देखें कि कौन सा आदमी उनका सच्चा प्रतिनिधि होगा, कौन साहस-पूर्वक उनकी पुकार दूसरों तक पहुंचाने का सत्य प्रयत्न करेगा। म्यूनिसिपल बोर्ड स्वराज्य की पहिली सीढ़ी है। यदि इनमें योग्य कर्मचारी रहें तो बहुत कुछ सुधार हम विना बाहरी सहायता के ही कर सकते हैं। जो पदाधिकारी अनुचित व्यवहार करें उन्हें हम रोक सकते हैं और हाकिमों पर भी हमारा प्रभाव पड़कर शासन-कार्य अन्ततः हमारे हित-विरुद्ध नहीं हो सकता।

देहाती बोर्ड

म्युनिसिपल बोर्डों की भांति देहाती बोर्ड (Rural) अपने अपने क्षेत्र में स्वास्थ्य, सफाई, प्रारम्भिक शिक्षा और औषधादि का विचार रखने के उद्देश्य से संगठित किये गये हैं। इनके अधिकार व आय

यथेष्ट न होने से इनका कार्य भी बहुत परिमित है। इनका शुभसूचक श्रीगणेश लार्ड मेओ व रिपन के समय में हुआ था, परन्तु गत ३० वर्षों मे यथेष्ट उन्नति नही हुई।

मद्रास व मध्य प्रान्त मे देहाती बोर्डों के तीन भेद हैं–

इनके भेद

(१) एक बड़े गांव या छोटे छोटे गावों के एक समूह में एक लोकल (Local) बोर्ड रहता है।

(२) कोई एक सौ गावों का एक तालुका होता है। एक या अधिक तालुकों पर एक तालुक बोर्ड रहता है।

(३) एक ज़िले के सब तालुक बोर्डों पर ज़िला बोर्ड (District Board) निगरानी करता है।

बम्बई में केवल दो ही भेद हैं—ज़िला बोर्ड और तालुक बोर्ड। बंगाल, पंजाब, पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्त मे ज़िला बोर्ड स्थापित कर दिये गये है। छोटे लोकल बोर्डों के बनाने का अधिकार स्थानीय सरकारों को दे दिया गया है। आसाम में ज़िला बोर्ड नही है; वहां केवल स्वाधीन सब-डिवीजनल (Sub-divisional) बोर्ड ही हैं। संयुक्त प्रान्त में सब-डिवीज़नल बोर्ड अनावश्यक समझे जाकर हटा दिये गये हैं।

बर्मा व बलोचिस्तान मे न ज़िला बोर्ड है और न छोटे बोर्ड। पश्चिमोत्तर सीमा प्रदेश को छोड़, ज़िला व लोकल बोर्डों में प्रायः चुने हुए मेम्बरों का ही आधिक्य है। परन्तु इन बोर्डों मे म्युनिसिपलटियों की अपेक्षा प्रतिनिधि प्रणाली बहुत कम व्यवहृत होती है।

ज़िला व लोकल बोर्डों के संगठन जानने के लिए आगे एक नक़शा दिया जाता है।

	बोर्डों की संख्या	मेम्बरों की कुल संख्या	नियुक्ति के विचार से			काम		जाति	
			Ex-officio	नियुक्त	चुने हुए	सरकारी	गैरसरकारी	यूरोपियन व एंग्लोइंडियन	हिन्दुस्तानी
बंगाल	२५	५०९	१३३	१६६	२१०	१५८	३५१	९२	४१७
	७१	८४३	४९	४३७	३५७	१००	७४३	३८	८०५
बिहार उड़ीसा	१८	३९१	१०७	१३५	१४९	१२८	२६३	१४२	२४९
	४०	४८९	५३	३८०	५६	७६	४१३	७१	४१८
आसाम	१९	३१६	७६	६४	१७६	८०	२३६	१३३	१८३
संयुक्त प्रान्त	४८	८९३	३	२७१	६१९	२४७	६४६	९२	८०१
पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्त	५	२१८	५१	१६७	...	५१	१६७	२५	१९३
मध्य प्रान्त और बरार	२१	५१७	१०	१३०	३७७	७२	४४५	१६	५०१
	७९	१३३३	२७	३५७	९४९	१४३	११९०	७	१३२६

पंजाब	१६	१११७	२४६	४७६	३६२	२५४	८५८	७३	१०४१
	१७	३१३	१८	१०७	१८८	१८	२६५	१	३१२
मद्रास	२५	७६५	१२४	२८२	३५६	२६८	४२८	१२६	५६७
	६५	१४८४	६७	६८६	३१८	४०३	१०८१	७४	१३३०
बम्बई	२५	५४४	११३	१८६	२४२	१३५	४०६	६७	४७७
	२१२	३०८७	४३६	१२७८	१३७०	६०५	१४८२	१३०	२६५७
कुर्ग	१	१८	७	६	२	१२	६	७	११
अजमेर-मेरवाड़ा	१	४१	१६	६	१६	१०	३१	४	३७
	१६८	५०१३	८१०	१८३६	२३६६	१३४०	३६०४	६५०	४२६४
—	५३३	७८६५	७५६	३५१२	३४१४	१४२५	६४४०	४५४	७३३१

ऊपर जो बोर्डों की संख्या दी है, उनके अतिरिक्त मद्रास में ३६३ यूनियन कमिटी है। (इनके मेम्बर ३७४६ हैं जिनमें से केवल ४३ युरोपियन हैं)। एवं बंगाल में ५६ और विहार-उड़ीसा मे ५ युनियन कमिटी हैं।

बारीक टाइप में दी हुई संख्याएं लोकल और अधीन जिला बोर्डों की हैं और मोटे टाइपवाली जिला-बोर्डों की है।

सभापति

ज़िला बोर्ड का सभापति चुना हुआ रहे या नियुक्त किया जाया करे, यह स्थानीय सरकारों की इच्छा पर निर्भर है। मध्य प्रान्त में सभापति चुना हुआ एवं साधारणतया ग़ैरसरकारी रहता है। इसको छोड़ अन्य सब प्रान्तों में ज़िला बोर्ड के सभापति प्रायः कलक्टर साहब ही हुआ करते हैं।

कलक्टर को बोर्डों का सभापति नहीं होना चाहिए क्योंकि ऐसा होने से स्वतंत्र इच्छा प्रकट नहीं की जा सकती। यदि सरकारी कर्मचारी ही को सरकार नियत करना उचित समझे तो किसी और कर्मचारी को जिसका अधिकार प्रधानत्व के अधिकार के अतिरिक्त अधिक न हो नियुक्त करे।

बोर्डों की आय के श्रोत

देहातों में फी घर कुछ हलका सा टैक्स वसूल किया जाता है जो स्वास्थ्य-सम्बन्धी कामों में व्यय किया जाता है। अधिकतर आय उस महसूल से होती है जो भूमि पर लगाया जाता है और जो सरकारी वार्षिक लगान के साथ ही प्रायः एक आना फी रुपये के हिसाब से वसूल करके इन बोर्डों को दे दिया जाता है। इसके अतिरिक्त विशेष कार्यों के लिए सरकार कुछ रक़म प्रदान कर देती है। आय के अन्य श्रोत तालाब, घाट, सड़क पर के महसूल हैं। अधीन-ज़िला बोर्डों का कोई स्वतंत्र आय-श्रोत नहीं, उन्हें समय समय पर ज़िला बोर्डों से ही कुछ मिल जाता है। सन् १९११-१२ मे देहाती बोर्डों की समस्त आय पांच करोड़ रुपया रही. जिसमें से आधी सार्वजनिक कार्यों में व्यय हुई। कहना नहीं होगा कि उक्त आय ग्रामों की जनसंख्या व क्षेत्रफल देखते बहुत क्षुद्र सी है। यही एक प्रधान कारण है कि हमारी अधिकांश जनसमाज

में (जो गांवों में रहनेवाली है) अभी तक स्थानीय स्वराज्य से यथेष्ट लाभ नहीं हुए है। आवश्यक है कि उनकी आय व उनके अधिकार बढ़ाये जावें।

प्राचीन पंचायत-पद्धति

प्राचीन भारत में प्रत्येक गांव अपनी प्रायः सब ही आवश्यकताएं स्वयं पूरी कर लिया करता था। एक एक गांव में एक पंचायत रहती थी जो रक्षार्थ अपनी पुलिस रखती, स्वयं भूमि-कर वसूल कर राज-कोष में भेजती, और छोटे मोटे झगड़ों का स्वयं निपटारा करती थी जिससे सरकारी न्यायालय की अधिक शरण न लेनी पड़ती। मुग़ल बादशाहों के पश्चात् उक्त ग्रामीन सहयोग का ह्रास होता गया, और अब वह लुप्तप्रायः हो गया है, केवल कुछ थोड़े से चिह्न शेष हैं जो उसके उच्च आदर्श की याद दिलाते है। प्राचीन पंचायत के थोड़े से काम कुछ दूसरे रूप से अब लोकल बोर्डों द्वारा पूरे होते है, अतः इनके प्रचार व उन्नति की आवश्यकता है। परन्तु प्रत्येक गांव मे एक एक पंचायत स्थापित हुए बिना जनता मे पूर्ण-रूप से जागृति नही होने पावेगी। मुकद्दमेबाज़ी का खर्च दिनों दिन बढ़ता जाता है। ग्रामो में स्वच्छ जल की शिकायत अभी बनी ही हुई है, सड़कों का तो अभी उचित रूप से प्रारम्भ ही नही माना जा सकता। इन सब बातों के सुधारार्थ आवश्यक है कि प्रत्येक शिक्षित भारतवासी अपने उत्तर-दायित्व व देश-कल्याण को ध्यान मे रखता हुआ प्रत्येक ग्राम में पंचायत-प्रणाली के पुनरुद्धार की तन मन से चेष्टा करे।

अष्टम् परिच्छेद

सरकारी आय-व्यय

प्रवन्ध सम्वन्धी संक्षिप्त इतिहास

सन् १८३३ ई० तक वम्बई, मद्रास व बंगाल के तीनों प्रान्तों में जुदा जुदा हिसाव रहता था। उस वर्ष के ऐक्ट से फोर्ट विलियम (कलकत्ते) के गवर्नर-जनरल को समस्त देश के हिसाव की देख रेख का अधिकार मिल गया। सन् १८५७ ई० के उपद्रव के पश्चात् मितव्ययिता की अत्यन्त आवश्यकता अनुभव होने लगी और विलसन साहव वड़े लाट की कौंसिल का प्रथम अर्थसचिव वनाये गये। सन् १८७१ ई० तक अकेले भारत-सरकार को ही धन-प्रवन्ध के सव अधिकार रहे: जितना रुपया उचित समझती, वह प्रान्तिक सरकारों को खर्च करने के लिये देती। इस स्थिति में प्रान्तिक सरकार आय वसूल करने के काम में कुछ विशेष उत्साह न लेती थीं। वे भारत-सरकार के केवल एजंट की भांति थीं जिन पर कोई उत्तरदायित्व न था; जितना उन्हे मिलने की आशा होती उससे अधिक वे भारत-सरकार से मांग करतीं, और जो कुछ हाथ लगता सव खर्च कर डालती थीं।

सन् १८७१ ई० में लार्ड मेओ ने प्रान्तिक सरकारी उत्तरदायित्व का भाव उत्पन्न कर उक्त स्थिति सुधारने की चेष्टा की। उसने पुलिस, शिक्षा, जेल, सड़क, पव्लिक मकानात और औषधालय आदि के कार्य प्रान्तिक सरकारों के सुपुर्द किये, और इनके खर्च के लिए इन विभागों की आय तथा कुछ और सालाना रक़म उन्हें दी जाने लगी।

लार्ड लिटन ने खर्च के कुछ और मद प्रान्तिक सरकारों के सुपुर्द किये, कुछ प्रान्तो को भूमि-कर का हिस्सा, कुछ हाकिमों का वेतन व न्याय कार्य मिल गया तथा उनको सालाना मिलनेवाली रकम वढ़ा दी गयी और इस समझौते को समय समय पर शोधन व परिवर्तन करने का नियम कर दिया गया।

सन् १९०४ ई० में प्रान्तिक सरकारों को मिलनेवाली रक़म निर्द्धारित की गयी और केवल विशेष हालतों मे उसके परिवर्तन का नियम रखा गया। सन् १९११ ई० से उनकी आय स्थायी कर दी गयी।

भारतवर्ष के धन के प्रवन्ध में चार अधिकारी हैं—

अधिकारीवग

(१) स्टेट सेक्रेटरी—यह उस खर्च का उत्तरदाता है जो भारतवर्ष के सम्बन्ध में इगलैंड में उठता है, एवं होम चार्जेज़ (Home Charges) या विलायती खर्च* के नाम से प्रसिद्ध हैं। यह कर्मचारी भारत सरकार के आर्थिक कार्यों की निगरानी रखता है।

(२) भारत सरकार—यह वह रुपया खर्च करती है जिसका सम्बन्ध समस्त भारतवर्ष से हो और प्रान्तिक सरकारो के खर्चे की देख भाल रखती है।

(३) प्रान्तिक सरकार—ये भारत सरकार व स्टेट सेक्रेटरी की निगरानी में वह रुपया खर्च करती है जिसका सम्बन्ध उनके प्रान्त से है। इसका अधिकार उन्हें प्रान्तिक

---

* इसका विशेष व्यौरा आगे दिया जावेगा।

ठेकों (Provincial Contracts) या भारत सरकार के साथ किये हुए समझौतों से प्राप्त है।

(४) ज़िले व म्यूनिसिपलटियों के कर्मचारी—इन्हें इस विषय का अधिकार भारत सरकार तथा प्रान्तिक सरकारों के कानून से मिला हुआ है।

जिन टैक्सों से उक्त चार अधिकारियों के खर्च का रुपया मिलता है उनके निर्धारित करने का अधिकार एक मात्र भारत सरकार (गवर्नर-जनरल व उनकी कौंसिल) को है।

बजट

साल* आरम्भ होने के पूर्व सब आय व व्यय का अनुमान एक खाते में दर्ज होता है। इसे अंग्रेजी में बजट ऐस्टिमेट (Budget Estimate) कहते हैं। ज्यों ज्यों साल व्यतीत होता जाता है यह प्रगट होता जाता है कि कौन से मद् में आय व्यय पहिले किये अनुमान से कम ज्यादा होगा। उदाहरणार्थ अकाल पड़ गया और पूरा लगान (कृषी-कर) वसूल न हो सका; अथवा कहीं लड़ाई छिड़ जाने से उसके लिए कुछ रक़म अलग करनी पड़ी, तो या तो खर्च कम करना होगा या ऋण लेना होगा। अथवा यदि आय आशा से अधिक हो गयी, तो या तो कुछ मदों में व्यय बढ़ाया जा सकता है या पहिले ऋण का कुछ अंश चुकाया जा सकता है। इस बात

* हिसाब के लिए एक वर्ष की पहिली अप्रैल से दूसरे वर्ष की ३१ मार्च तक एक साल समझा जाता है। वर्तमान साल जो गत प्रथम अप्रैल से आरम्भ हुआ है १९१४–१५ लिखा जाता है। इसी प्रकार और भी समझो।

का विचार भारत सरकार के कोप विभाग का मेम्बर करता है। इस प्रकार आवश्यकतानुसार बजट में परिवर्तन किया जाता है और साल के भीतर दूसरा शोधित अनुमान (Revised Estimate) प्रकाशित हो जाता है। पुनः जब सब ज़िलों व प्रान्तों का हिसाब एकत्र हो जाता है तो सर्व-साधारण की विज्ञप्ति के निमित्त यथा-तथ्य हिसाब (Accounts) छप जाते हैं।

नीचे सन् १६११-१२ ई० के वास्तविक आय व्यय का 'हिसाब' दिया जाता है। जिन कामों में आय और व्यय दोनों हुए है तो उन दोनों को न देकर केवल उनका अन्तर ही दिखाया गया है। उदाहरणार्थ रेल तार डाक व सिंचाई के व्यापारिक कामों में सरकार का खर्च निकाल कर जो आय बची रहती है वही बतायी गयी है और पूर्ण आय और व्यय दोनो अलग अलग नहीं दिखाये गये।

सरकारी आय १६११-१२ ई०.		करोड़ों में
(क)	१—भूमि-कर	३०
	२—जंगल	२'६
	३—रजवाड़ो से	·६
		३३'५
(ख)	अफीम	७'६
(ग)	टैक्स	
	१—नमक	४'८
	२—स्टाम्प	७'२
	३—आबकारी (Excise)	११'२

सकते हैं व सरकारी कर्मचारियों को इसमें क्या आपत्तियें हैं इत्यादि बातों के लिए स्वतंत्र लेखों व पुस्तकों की आवश्यकता है। हम केवल प्रसंगानुसार इतना ही कहेंगे कि समस्त सरकारी आमदनी की एक तिहाई से अधिक का यही एक स्रोत है। हम बहुधा पढ़ा करते हैं कि आज कल जो भूमि-कर लिया जाता है वह पहिली गवर्मेंटों की अपेक्षा बहुत कम हैं प्राचीन समय मे राजा लोग समस्त पैदावार का $\frac{१}{६}$, $\frac{१}{३}$ व $\frac{१}{२}$ तक ले लिया करते थे: आज कल सरकार केवल आठ फी सदी से लेकर ४॥ फी सदी तक (वास्तविक मुनाफे के प्रायः आधे के हिसाब से) लेती है। इतनी भारी रियायत से दीन कृषकों की दशा कितनी सुधर जानी चाहिए अथवा उनकी दरिद्रता ही क्यो रहनी चाहिए, यह कल्पनातीत है।

नोट—बात यह है कि पहिले पैदावार का भाग लिया जाता था और अब पैदावार की परवा न करके नियत भाग लिया जाता है। पहिले इसके अतिरिक्त मुकद्दमे आदि का कोर्ट फीस आदि व्यय नही करने पडते थे, किन्तु अब इनके लिए अलग व्यय करना पडता है। अत यह गलत है कि पहिले भूमि-कर अधिक था।

(क) २—जंगल की आमदनी। यह प्रायः लकड़ी तथा जंगल की अन्य पैदावार की बिक्री से मिलती है। इसका विभाग सन् १८६१ ई० में स्थापित हुआ। इसके प्रबन्ध का उद्देश्य यद्यपि आय न होकर केवल प्रजा-हित ही है, तथापि इससे सरकार को आय होने लग गयी है। गत १२ वर्षों में जंगल की आमदनी ७० फ़ी सदी बढ़ गयी है। इस विभाग

से प्रजा को इतनी असुविधा भी है कि कुछ स्थानों में लोगों को पशु चराने को यथेष्ट भूमि नहीं मिलती, तथा लकड़ी के अभाव में गोबर जलाया जाने के कारण खेतों में खाद की कमी हो गयी है।

(क) ३—रजवाड़ों से नज़राना प्रायः उन संधियों के के अनुसार आता है जिनसे पूर्वकाल में उनके कतिपय स्थानों का सरकार अंग्रेज़ी के साथ परिवर्तन हुआ था, एवं जिनसे वे अपने राज्यों में फौज रखने के लिए वाधित हुए थे।

(ख) अफीम। इस खाते में केवल चीन तथा अन्य बाहर के देशों से होनेवाली आय का हिसाब रहता है। यह आय अब घटती जा रही है। अंग्रेज़ी भारत में जो अफीम पैदा होती है, उसे बंगाल-अफीम कहते हैं। इसका ठेका सरकार के हाथ में है और काश्तकारों को इसके लिए सरकारी लाइसेंस (अनुमति) लेनी होती है। तमाम अफीम सरकारी एजंट ६) छ रुपए सेर मोल ले लेते हैं। उसमें से बाहर जानेवाली अफीम के संदूक कलकत्ते में नीलाम कर दिये जाते हैं और बिक्री के इन दामों में से काश्तकारों का मूल्य दिये जाने पर जो बचत रहती है, वह सरकारी आय होती है।

जो अफीम अंग्रेज़ी भारत में रहनेवालों के खर्च के लिए रखनी होती है, वह शुद्ध करके ८॥) साढ़े आठ रुपए सेर के हिसाब से आबकारी विभागवालों को दे दी जाती है जो खास खास व्यक्तियों को इसके बेचने का लाइसेंस देते हैं। इससे जो आय होती है उसका हिसाब आबकारी खाते में रहता है जिसका आगे उल्लेख किया जायगा।

अंग्रेज़ी भारत में अफीम के लिए पोस्त के डोडुों की खेती केवल सयुक्त-प्रान्त के एक निर्धारित हिस्से में होती है जिसका क्षेत्रफल क्रमशः कमती किया जा रहा है क्योंकि चीन सरकार से की हुई संधि के अनुसार अब वहां जाने वाली अफीम घटती जा रही है, और यदि वहां की सरकार अपने यहां इसकी पैदावार बंद करने में सफल हो जावे तो भारत सरकार यहां से उस देश को जानेवाली अफीम और भी घटाती जायगी, फिर इसकी पैदावार और फलतः आय भी कम होती जायगी।

जो अफीम बड़ौदा एवं राजपुताना और मध्य भारत आदि की कुछ देशी रियासतों में तय्यार होती है उसे मालवा-अफीम कहते हैं। यह जब अंग्रेज़ी भारत में आती है तो इस पर भारी ड्यूटी (महसूल) लगायी जाती है।

(ग) १—नमक। यह टैक्स प्रगट अथवा व्यक्त रूप से प्रत्येक आदमी पर लगता है; राजा हो चाहे रंक सबको ही इसकी आवश्यकता पड़ती है। यही कारण है कि अधिकांश सभ्य देशों में इस पर टैक्स नहीं लगाया जाता। साधारणतया भारतवर्ष में एक मन नमक तैयार करने में दो ढाई आने से अधिक खर्च नहीं पड़ता और यहां सब नमक पर टैक्स लगता है चाहे वह यहां बने अथवा बाहर से आवे। सन् १९०३ से पहिले यहां २॥) रु० मन तक टैक्स लग गया था। उस समय से यह क्रमशः घट रहा है। सन् १९०३ ई० में २), सन् १९०५ ई० में १॥) और सन् १९०७ ई० से १) फी मन रहा। इससे उसकी आय भी कुछ घट चली है; परन्तु उस निस्बत से नहीं घटी है जिससे कि टैक्स कम हुआ है, क्योंकि अब इसका खर्च भी तो

बढ़ता ही जा रहा है। पशुओं की कौन कहे, पहिले अनेक आदमियों को स्वयं अपने लिए भी यथेष्ट नमक (वार्षिक १० सेर फी आदमी) नहीं मिलता था जिसका परिणाम उनके स्वास्थ्य पर बहुत बुरा पड़ा।

(ग) २—स्टाम्प टैक्स। यह दो प्रकार है, प्रथम कोर्ट (Court) फीस या अदालतों में पेश होनेवाले मुकद्दमों के कागज व दर्ख्वास्तें आदि पर स्टाम्प का व्यय। दूसरे व्यापार व उद्योग धंधे सम्बन्धी कागज़ों पर—दस्तावेज हुंडी परचे आदि पर।

(ग) ३—आबकारी। सरकार को यह आय अफीम, शराब, गांजा, भंग, चरस आदि मादक द्रव्यों के बनाने व बेचने से होती है। इसकी दिनों दिन बढ़ती ही हो रही है। गत कुछ वर्षों में ही यह डबल हो गयी है। सरकारी तौर पर यह बताया गया है कि इस आय-वृद्धि का कारण उक्त पदार्थों का अधिक सेवन नही है, वरन् यह है कि अब अधिक निगरानी रक्खी जाती है और जनसंख्या बढ़ती जा रही है। अवश्य ही इस कथन से पूर्णतया संतोष होना असम्भव है। इस विभाग की आय चिन्ता-जनक है और जनता की सामाजिक व नैतिक स्थिति की ओर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता दिखाती है।

(ग) ४—प्रान्तिक महसूल। लोकल व म्युनिसिपल बोर्ड स्थानीय कार्यों के लिए जो रुपया उगाहते हैं, उसे अब भारत सरकार के बजट में शामिल नहीं किया जाता। कभी कभी सरकार स्थानीय कार्यों के लिए कुछ टैक्स वसूल करती है; इन्हे प्रान्तिक महसूल कहते हैं। बजट के उक्त मद में विशेष कर भूमि के उन महसूलों की आय है जो बंगाल

में सड़क, औषधालय व पाठशालाओं के निमित्त लगाये जाते हैं।

५—कस्टम। परदेस से आनेवाले तथा यहां से बाहर जानेवाले माल पर कर। यह एक निर्द्धारित हिसाब से कुछ निश्चित पदार्थों पर लगाया जाता है और समय समय पर बदला जा सकता है। हथियार, बारूद, फौजी सामान, शराब, अफीम, मट्टी का तेल, नमक, तम्बाकू और चांदी पर विशेष टैक्स लगता है। इनके अतिरिक्त जिन बहुत से पदार्थों पर मूल्य के ५ फ़ी सदी के हिसाब साधारण टैक्स लगता है, उनमें से उल्लेखनीय ये हैं—कैंची, चाकू आदि कतरने के औज़ार, भिन्न भिन्न प्रकार के तेल, घड़ी घंटे, गाड़ियां, साबुन, छतरी, चमड़ा, लिखने पढ़ने का सामान और ऊनी कपड़े। लोहे और फौलाद पर १ फ़ी सदी के हिसाब हल्का टैक्स है। चावल या चावल के आटे को छोड़ और किसी बाहर जानेवाले पदार्थ पर विशेष टैक्स नहीं लगाया जाता, और उक्त पदार्थों पर ३ आने मन के हिसाब टैक्स है।

रूई का जो सामान भारत में आता है उस पर ३॥ फी सदी के हिसाब महसूल लगता है। इसी की टक्कर का टैक्स उस माल पर लगाया जाता है जो भारतीय रुई के कारख़ानों में तैयार होता है। यह टैक्स अनुचित और अनावश्यक प्रतीत होता है, मानो इसका उद्देश्य अबाध-व्यापार-नीति को निबाहना और अंग्रेज़ी रूई के कारखानों के मालिकों की संतुष्टि है। सरकार से बारम्बार इस टैक्स के हटाये जाने के वास्ते निवेदन किया जा चुका है, पर सरकार का कथन है कि इससे जनसमूह को सस्ते कपड़े का फ़ायदा मिलता है।

(ग) ६—इन्कम (आमदनी) टैक्स। सन् १८८६ ई० से पहिले व्यापार धंधों के लिए सरकारी लाइसेंस लेना पड़ता था। उक्त वर्ष में इन्कम टैक्स का ऐक्ट पास हुआ; उससे ५००) रु० से २०००) रु० तक की सालाना आमदनी पर चार पाई फी रुपया, और इससे अधिक पर पांच पाई फी रुपए के हिसाब टैक्स लगने लगा। सन् १९०३ ई० के सुधारक ऐक्ट से एक हज़ार रुपए से कम की सालाना आमदनी पर टैक्स नहीं लगाया जाता। भूमि या कृषि से जो आय होती है वह इन्कम टैक्स से बरी है क्योंकि उसे दूसरा टैक्स देना होता है।

७—रजिष्टरी। इसमें पुराने कागज़ात की खोज व रजिष्टरी कराने की फीस शामिल है। दस्तावेज़ों की नकल व रजिष्टरी के लिए प्रत्येक ज़िले में दफ़्तर हैं। कुछ विशेष प्रकार की दस्तावेज़ों की रजिष्टरी कराना कानूनी तौर पर आवश्यक है जैसे स्थायी जायदाद का एक व्यक्ति से दूसरे के नाम कराना।

(घ) १-२—डाक और तार जन-साधारण के सुभीते के लिए हैं और मुनाफे के विचार से नहीं; इनका काम धीरे धीरे बढ़ता और फैलता जा रहा है; अब इनमें घाटा नहीं रहता; आगे आगे इनकी आय बढ़ती ही जायगी।

३—रेल। इसका विशेष उल्लेख आगे होगा। थोड़े ही वर्षों से इसमें आय होने लगी है। वर्षा पर यह आय बहुत निर्भर रहती है, क्योंकि उसका आने जानेवाले माल पर प्रभाव पड़ता है। इसके तथा सिंचाई के कामों के लिए रुपया उधार लेकर लगाया जाता है। इसका सविस्तार वर्णन आगे किया जायगा।

३—सिंचाई। यह आय मुख्यतः उन खेतों के मालिकों से होती है जो सिंचाई के लिए सरकारी नहर आदि से जल लेते हैं। यह महसूल पानी की मिक़दार पर नहीं लगाया जाता, वरन् जिस प्रकार की फ़सल हो अथवा जितना क्षेत्रफल हो, उसके निर्धारित हिसाब से लगाया जाता है। कहीं कहीं जिनके खेत नहरों के पास है उन्हें भी कुछ कर देना होता है। कृषि-प्रधान भारत में रेल की अपेक्षा सिंचाई के कामों के ही अधिक विस्तार की आवश्यकता है, और इनमें थोड़े से व्यय से भी सरकार और प्रजा दोनों को अपेक्षाकृत अधिक लाभ होता है, तो भी गत वर्षों में विशेष कृपादृष्टि रेलों पर ही रही; उन्हींके हिस्से में अधिकांश रुपया आया। अब सिंचाई में व्यय की औसत बढ़ाने की आवश्यकता है; साथ ही नहरों के बन्द करने व खोलने में किसानों के सुभीते का विचार रहना चाहिए जिससे उक्त व्यय से यथेष्ट लाभ हो सके।

टैक्स की औसत

प्रत्येक आदमी को क्या औसत टैक्स देना होता है इसका अन्दाज़ा इस प्रकार लग सकता है कि समस्त टैक्स की आय को (जिसमें भूमि-कर भी सम्मिलित होना चाहिए) सरकारी भारत की जनसंख्या से विभक्त कर दिया जावे, इस हिसाब से सन् १९११-१२ ई० मे फ़ी आदमी टैक्स की औसत २॥≡)॥ दो रुपए सवा ग्यारह आने हुई। मिस्टर डिगवी के सपरिश्रम हिसाब से यह मालुम हुआ है कि प्रत्येक भारतवासी की आमदनी १८॥-) अठारह रुपए नौ आने सालाना है। यदि कर्ज़न महोदय का अनुमान स्वीकार किया जाय तो ३०) रु० सालाना समझनी पड़ेगी। क्योंकि इंगलैंड उन पाश्चात्य सभ्यता-

अभिमानी देशों में से है जिनमें इतनी आय पर उपर्युक्त टैक्स नहीं लगाया जाता। भारतीयों की यह आशा स्वाभाविक है कि टैक्स की दर अवश्य कमती की जायेगी और वह भी नातिदूर-भविष्य में।

(ङ) टकसाल की आय से वह रक़म न समझनी चाहिए जो ८, ९ आने की चांदी से १६ आने में चलनेवाला रुपया बनाने से होती है; क्योंकि यह बचत तो स्वर्ण सुरक्षित भंडार में जमा होती है। टकसाल की आय के श्रोत निम्नलिखित हैं—

(१) नवीन बननेवाले रुपयों पर कुछ फ़ी सदी के हिसाब सरकारी आय।

(२) कांसा या निकल के सिक्के बनाने से सरकारी मुनाफ़ा।

(३) सरकारी उपनिवेशों के सिक्के ढालने से सरकारी फ़ीस।

(च) परिवर्तन (Exchange)। कानून से रुपया सोलह आने का ठहराया जाता है, पर कई बार विलायती खर्चें के लिए जो रुपया इंगलैंड भेजा जाता है उसके मूल्य में फेर बदल हो जाता है; इसका जो अंतर रहे वही परिवर्तन की आय कही जाती है।

सरकारी व्यय १९११-१२

	करोड़ों में रुपये
(क) ऋणसम्बन्धी	
(रेल व सिंचाई के खर्चें का सूद इसमें शामिल नहीं है)	·८८

(ख) सेनासम्बन्धी	
१—स्थल-सेना	२७·५३
२—जल-सेना	·५४
३—फौजी वा देश-रक्षा के विशेष काम	१·३
	२६·४
(ग) आय वसूल करने का व्यय	६·७५
(घ) सिविल सर्विस	
१—सिविल-विभाग	२२·८
२—विविध व्यय	६·३
३—सिविल काम	७·७
	३६·८
(ङ) अकाल सहायता	१·५
(च) प्रान्तिक कमी वेशी	
जमा	१·३
खर्च	०
	७६·६३
सरकार के पास	५·८
कुल जमा	८५·४

(क) समस्त ऋण दो भागों में विभक्त होता है—(१) सार्वजनिक कार्यों का ऋण अर्थात् रेल व सिंचाई इत्यादि के कामों के लिए जो रुपया उधार लिया जाता है।

(२) साधारण ऋण—कुल ऋण में से सार्वजनिक कार्यों का ऋण निकाल कर जो शेष रहता है वह इस संज्ञा से पुकारा जाता है। वर्तमान समय में भारतवर्ष का कुल ऋण साढ़े तीन सौ करोड़ के लगभग है। यह क्रमशः किस प्रकार इतना अधिक हो गया है, यह हमें लिखना नहीं है। यद्यपि आज दिन वहुतेरे सभ्य देश अपनी उन्नति के लिए ऋण लेने को वाध्य होते हैं, फिर भी देश की आय का विचार रखते हुए ही रुपया व्यय होना चाहिए। अनेक विचारशीलों का मत है कि भारत का शासन वहुत खर्चीला है; सोचना चाहिए कि उक्त खर्च में कहां तक कमी होनी अत्यन्तावश्यक है। इसके अतिरिक्त यदि शिक्षा प्रचार, स्वास्थ्य रक्षा व उद्योग धंधों के लिए ऋण ले लिया जावे तो कुछ वुराई नहीं।

(ख) इसका उल्लेख अन्यत्र किया गया है। यह व्यय इतना अधिक है कि तमाम भूमि-कर इसीमें चला जाता है। इस ओर कब ध्यान जावेगा?

(ग) इसमें निम्नलिखित व्यय सम्मिलित हैं—

(१) ज़िले के शासन का व्यय।

(२) भूमि-सम्बन्धी कागज़ात रखने (Land-records) के विभाग का व्यय।

(३) भूमि की माप और वन्दोवस्त का व्यय।

(घ) १—सिविल विभाग। इसका व्यय वरावर वढ़ता जा रहा है। सन् १९०१ ई० से १९११ ई० तक दस सालों में यह ७६ फ़ी सदी वढ़ गया है। इसके मुख्य कर्मचारी निम्नविभाग में हैं—साधारण शासन कार्य (जिसमें इंडिया आफ़िस, वाइसराय, गवर्नर, लेफ़्टिनेंट-गवर्नर और उनकी

कौंसिलें शामिल हैं), न्याय व जेल, पुलिस, शिक्षा, स्वास्थ्यादि।

२—विविध व्यय में सिविल सर्विस वालों की पेन्शन, फ़रलो व भत्ता आदि एवं स्टेशनरी (लिखाई पढ़ाई के सामान) का खर्चा शामिल हैं।

३—इसमे सरकारी मकानात व सड़क आदि का व्यय होता है।

(ङ) सन् १८७८ ई० से १॥ करोड़ रुपए सालाना अकाल के निमित्त रखे जाने लगे हैं। जब इस सम्बन्ध में रुपया नही उठता व कम उठता है, तो (१) इसमें से रेल व सिंचाई के ऐसे कामों में लगाया जाता है जिनसे अकाल के रुकने की सम्भावना हो, अथवा (२) आय बढ़ानेवाले ऐसे कामों में लगाया जाता है जिनके लिए, यदि इस फंड का रुपया न होता, तो सरकार ऋण लेना आवश्यक समझती, या (३) इससे ऋण उतारा जाता है।

विलायती खर्चा

साधारण परिचय

ऊपर जो भारतवर्ष का असली व्यय दिखाया गया है, इसमे सन् १९११-१२ ई० में २८ करोड़ रुपए भारत के निमित्त इंगलैंड में व्यय होने के कारण वहां भेजे गये; इसे विलायती खर्च (Home Charges) कहते हैं। श्रीमान् दादाभाई नौरोजी ने इसे 'भारत के लूट के रुपए' की संज्ञा दी है। कुछ अन्य लेखकों ने इसे 'सलामी का धन' व 'चूसनी' (Drain) का माल कहा है। इसका साधारण परिचय नीचे दिये हुए ब्यौरे से लग जावेगा।

	करोड़ रु०
१—ऋण प्रबन्ध व सूद तथा रेल व सिंचाई के कामों पर सूद व वार्षिक व्यय (Annuities)	१६·१
२—भारतवर्ष के सिविल विभाग का खर्च	·४
३—इंडिया आफिस	·४
४—जल व स्थल सेना	१·५
५—रेल आदि का सामान व मशीन इत्यादि	१·७
६—फ़रलो, भत्ता	१·५
७—पेनशन व इनाम	६·७
	२८·३

कम करने के उपाय

वर्तमान स्थिति में उक्त व्यय का बिलकुल बन्द हो जाना तो कठिन दिखता है, तथापि प्रयत्न से यह बहुत कुछ कम अवश्य हो सकता है। उदाहरणार्थ जितने रुपयों के ऋण का प्रबन्ध भारतवर्ष में ही कर लिया जावे, उतने का ही सूद यहां रह सकता है; अपेक्षाकृत यहां सूद अधिक देना पड़े तो भी हरकत नहीं—अन्ततः उसमें देश का ही लाभ है। रेल के सामान आदि के विषय में यही कहा जा सकता है कि प्रसिद्ध टाटा महोदय के कारख़ाने के समान यदि देश भर में कई एक बड़े बड़े कारख़ाने चलाने का प्रयत्न हो तो सब पदार्थ यहीं मिल जाने से सरकार को उसके बाहर से मंगाने की आवश्यकता न रहेगी। स्वदेशी आन्दोलन के मार्ग में क्या क्या बाधाएं हैं, उन पर स्वतंत्र विचार होना चाहिए तथा उन्हें क्रमशः हटाने की व्यवस्था करनी ज़रूरी है। शेष सब मदों के विषय में हम एक मोटी सी बात यह कहेंगे कि जब लों अन्य देशों के कर्मचारियों से काम लिया जावेगा, उन्हें उच्च

वेतन भी देना होगा और उनके फ़रलो व पेन्शन का खर्चा भी रहेगा। सन् १८३३ ई० के ऐक्ट और पुनः सन् १८५८ ई० वाली महारानी की घोषणा* से भारतवासी किसी भी सरकारी नौकरी से बन्द नहीं किये गये है। योग्यता से वे सब पदों के अधिकारी हो सकते हैं। अब उचित है कि भारतनिवासी सरकार के प्रति अपनी योग्यता दर्शावें और वारम्बार उसे सिद्ध करें। सरकार का भी यह धर्म है कि लार्ड मेकाले जैसे प्रसिद्ध राजनीतिज्ञों की प्रतिज्ञानुसार भारतीयों को उच्च पदों पर नियत करने में, व उन्हें अपने देश के शासन के योग्य बनाने में अपना गौरव तथा अभिमान समझें, न कि उन्हें योग्य होते देख उदासीनता प्रगट करें।

भेजने की रीति

ऊपर जिस विलायती खर्चे का हमने उल्लेख किया है, उसके विषय में यह भी जान लेना आवश्यक है कि वह विलायत किस प्रकार भेजा जाता है। साधारणतया विदित हो कि यहां से जो माल इंगलैंड जाता है, उसमें से उतने माल के परिवर्तन में कोई विलायती सामान यहां नहीं आता जितने का मूल्य विलायती खर्चे के समान होता है। यह माल जिन विलायती व्यापारियों के नाम जाता है वे उसका मूल्य इंगलैंड में भारत के स्टेट सेक्रेटरी को दे देते है और वह उसके बिल (हुंडी) भारत सरकार के नाम बना कर भारतीय व्यापारियो के पास भेज देते है। ये भारतीय व्यापारी इन हुंडियों को भारत सरकार को दे देने पर उनका मूल्य पा लेते हैं। इस प्रकार विलायती व्यापारी तो भारतीय व्यापारियों को और भारत सरकार स्टेट सेक्रेटरी को नकद सिक्के भेजने की जोखम से बच जाती है।

---

* इस घोषणा का अनुवाद अन्यत्र दिया गया है।

नवम परिच्छेद

देशी रियासतें

देशी रियासतों से प्रयोजन भारतवर्ष के उन विभागों से है जहां पर हिन्दुस्तानी राजा या सरदार सरकार अंग्रेज़ी की छत्रछाया में रहते हुए राज्य करते हैं। इनकी कुल संख्या ७०० के लगभग है। इनमें से कुछ खासी बड़ी हैं और कुछ सामान्य गांव सरीखी हैं। बड़ी बड़ी १७५ रियासतें भारत-सरकार (Imperial Government) के अधीन हैं; शेष प्रान्तिक सरकारों के सुपुर्द हैं। आमतौर पर उन्हें दीवानी व फौज़दारी के अधिकार है। वे अपना लगान स्वतः वसूल करती हैं। उनमें से कुछ अपनी सीमाओं पर चुंगी भी लेती है और आवश्यकतानुसार फौज़ का प्रबन्ध करती हैं। लेकिन उनको दूसरी रियासतों से कोई राजनैतिक सम्बन्ध नहीं होता। इनका कुल क्षेत्रफल अंग्रेज़ी भारत के क्षेत्रफल के आधे से अधिक है और इनकी जनसंख्या अंग्रेज़ी भारत की जनसंख्या की तिहाई से कम है।

	क्षेत्रफल	मनुष्य-संख्या
अंग्रेज़ी भारत	११ लाख वर्ग मील	२४ $\frac{१}{२}$ करोड़
देशी रियासतें	७ " "	७ "
समस्त भारतवर्ष	१८ " "	३१ $\frac{१}{२}$ "

समस्त देशी रियासतें तीन श्रेणियों में विभक्त की जा सकती है।

१—उन रियासतों के समूह जो पास पास हैं उनमें। निम्न लिखित सम्मिलित हैं—

(क)—राजपुताना एजेन्सी। इसमें बीस २० रियासते हैं जिनमें से एक मुसलमान, दो जाट, और शेष राजपूत है। इनमें भारतवर्ष के प्राचीन राजवंश रहते हैं। बीकानेर, जैसलमेर, भरतपुर, अलवर, कोटा, धौलपुर, जयपुर, जोधपुर, उदयपुर मुख्य हैं। इनके ऊपर निगरानी रखनेवाला सरकारी कर्मचारी गवर्नर-जनरल का राज-प्रतिनिधि अर्थात् एजेंट आबू में रहता है। यहां का क्षेत्रफल १,३०,२६८ वर्गमील है, और मनुष्य-संख्या एक करोड़ से ऊपर है।

(ख)—मध्य देश एजेंसी। इसमे छोटी बड़ी सब मिला कर १४८ रियासते होती हैं। इनमें सबसे बड़ी रियासत ग्वालियर है। इसके अतिरिक्त इंदोर, भूपाल, रीवां, रतलाम, धार, बुंदेलखंड, बघेलखड, नीमार और मालवा मुख्य हैं। इसका एजेंट इंदौर मे रहता है। यहां का क्षेत्रफल लगभग ८०,००० वर्गमील है और जनसंख्या ९० लाख है।

(ग)—बलोचिस्तान। यह पश्चिमी सीमा पर स्थित होने से भारतवर्ष की फ़ारिस व अफ़गानिस्थान से रखवाली करता है। इसमें क़िलात के ख़ान और लसबेला के जैम का राज्य शामिल है। यह रियासत उसी सरकारी कर्मचारी की निगरानी में जो अंग्रेज़ी प्रान्त ब्रिटिश बलोचिस्तान का शासन करता है और केटा नगर में रहता है। इसका क्षेत्रफल ७२,००० वर्गमील, और जन संख्या चार लाख से अधिक है।

(घ)—काठियावाड़। बीस हजार वर्गमील के क्षेत्रफलवाले इस प्रायःद्वीप के अन्तर्गत सैकड़ों छोटी छोटी रियासते हैं। इनके सरदारो को भिन्न भिन्न श्रेणी के अधिकार दिये हुए हैं।

जो मुकद्दमे स्थानीय छोटे सरदारों (ठाकुरों) के अधिकारों से बाहर है, उनके फैसला करने के लिए सरकारी कर्मचारी नियत रहते हैं। सबका प्रधान अफसर सरकारी एजंट होता है जो राजकोट में रहता है।

२—बड़ी बड़ी पृथक रियासतें—

(क)—हैदराबाद। इसे पहिले पहल औरंगज़ेब के सरदार आसफ़जाह ने सन् १७१३ ई० में अपने अधिकार में किया था। जब मुग़ल साम्राज्य का बल घटने लगा तो वह स्वतन्त्र राजा बन बैठा। पश्चात् सरकार अंग्रेज़ी की सहायता करने से उसके वंशजों को और भी ज़िले मिल गये। अब यह प्रसिद्ध मुसलमानी रियासत है। इसका क्षेत्रफल ८२ हजार वर्गमील तथा जनसंख्या एक करोड़ तीस लाख से अधिक है। यहां की राजधानी हैदराबाद नगर में है।

(ख)—कश्मीर। सन् १८४६ ई० में सिक्खों के हारने पर यह राज्य अंग्रेजों के हस्तगत हुआ। पश्चात् अमृतसर की संधि से यह जम्बू के राजा गुलाबसिंह को दे दिया गया। यहां का क्षेत्रफल ८४ हज़ार वर्गमील तथा जनसंख्या ३० लाख से अधिक है। राजधानी श्रीनगर है।

(ग)—मैसूर। इसका उल्लेख कम्पनी के राज्य में हो चुका है। सन् १७९९ ई० में इसे सरकार अंग्रेज़ी ने एक मुसलमान अनधिकारी से छीन कर हिन्दू राजघराने को फेर दिया था। पश्चात् यहां के महाराज के व्यवहार से असंतुष्ट प्रजा के हितार्थ अंग्रेज़ों ने सन् १८३१ ई० में इसका प्रबन्ध अपने हाथ में लिया। पचास वर्ष व्यतीत होने पर सन् १८८१ ई० में पुनः यह रियासत हिन्दू राजा के अधीन हुई। तब से यहां बराबर शिक्षा तथा स्वास्थ्य के विषय में सुधार होता आ रहा है।

यहां का क्षेत्रफल तीस हजार वर्गमील और जनसंख्या ५८ लाख है। राजधानी मैसूर (महिशूर) नगर है।

(घ)—बड़ौदा। यहां का गायकवाड़ वंश का राजा सन् १८७५ ई० में राजद्रोह के सन्देह के कारण गद्दी से उतार दिया गया था। पश्चात् सरकार ने गायकवाड़ की विधवा रानी को उसी कुल के एक ऐसे लड़के को गोद लेने की आज्ञा दी जिसे उसने इस राज्य के योग्य समझा। वर्तमान समय में यही रियासत उन्नति-पथ पर सबसे आगे है। शिक्षा-प्रचार में इसका उत्साह न केवल प्रशंसनीय वरन् अनुकरणीय भी है। अनिवार्य तथा निःशुल्क शिक्षाप्रणाली, जिसके लिए सरकारी भारत में प्रजा अभी आन्दोलन ही कर रही है, यहां आरम्भ भी हो गयी है। स्थान स्थान पर सार्वजनिक हितार्थ पुस्तकालय खोले जा रहे हैं। कौंसिलों में प्रतिनिधि-प्रणाली में भी इस राज्य ने आदर्श कार्य किया है। इसका क्षेत्रफल आठ हज़ार वर्गमील और जनसंख्या २० लाख से अधिक है। यहां की राजधानी बड़ौदा नगर है।

३—सरकारी राज्य के अन्तर्गत छोटी छोटी रियासतें।

इस श्रेणी में वे सैकड़ों छोटे छोटे राज्य सम्मिलित हैं जो सरकारी प्रान्तों अथवा जिलों के बीच में पड़ गये हैं। मद्रास सरकार की अधीनता में ५, बम्बई में ३५४, संयुक्त प्रान्त में २, बंगाल और बर्मा में क्रमशः ३४ और ५२ हैं। इसके अतिरिक्त मध्य प्रान्त और आसाम की सरकार भी अपने निकटवर्ती छोटी छोटी देशी रियासतों के प्रबन्ध की देख रेख रखती है। इनमें से कोई कोई ज़िले के बराबर और किसी किसी में दस पांच गांव ही हैं। इनकी शान्ति का प्रश्न सरकार अंग्रेज़ी के लिए बड़े महत्व का है।

देशी रियासतों के विषय में, कम्पनी के समय में, एक स्थायी नीति न रही; वरन् समय समय पर गवर्नर-जनरल की प्रकृति अनुसार बदलती रही। पार्लिमेंट ने सन् १७९३ ई० में एक कानून कम्पनी को शासन-भार लेने से रोकने के लिए बनाया। कारनवालिस ने उसका यहां तक पालन किया कि उसने उन राज्यों को भी सहायता देना उचित न समझा जिन्होंने स्वयं इस निमित्त प्रार्थना की थी। उस समय स्थिति ऐसी थी कि यह अलग रहने की नीति अनर्थकारी प्रतीत हुई। यद्यपि सन् १७९३ ई० का ऐक्ट रद्द नहीं किया गया, हेस्टिंग्ज़ ने देशी रियासतों से 'सहायता पद्धति' (Subsidiary System) से संधि की जिसका उल्लेख कम्पनी के राज्य में हो चुका है। इस संधि से जहां देशी रियासतों में शान्ति स्थापित हुई, उसके साथ ही कम्पनी के राज्य की भी कुछ कम वृद्धि न हुई। पीछे लार्ड डलहौसी ने यह नीति रखी कि जहां कहीं राज्य-प्रबन्ध ठीक न हो, अथवा वारिस न रहे, वह रियासत अंग्रेज़ी राज्य में मिला ली जावे। न तो देशी रियासतों के प्रबन्ध ठीक करने का विचार किया गया, और न किसी को गोद लेने की इजाजत दी गयी। सन् १८५८ से, जब भारतवर्ष का राज्य कम्पनी के हाथ से निकल इंगलैंड की महारानी तथा पार्लिमेंट के हाथ में आया, यह दशा बदल गयी है।

कम्पनी की नीति

देशी रियासतों के प्रति सरकार की नीति अब यह है कि जब तक वे सरकार अंग्रेज़ी के प्रति राजभक्ति बनाये रक्खें, और पहिले की हुई संधि की शर्तों का यथोचित पालन करते रहें

वर्तमान सरकारी नीति

तब तक सरकार उनकी रक्षा करेगी और उनके अस्तित्व को स्थायी रक्खेगी। साधारण मामलों में देशी राजा अपने राज्य की व्यवस्था का प्रबन्ध स्वयं कर सकते हैं, परन्तु ब्रिटिश सरकार आवश्यकतानुसार उन्हें परामर्श देती रहती है। विशेष हालतों में समय का तकाज़ा होने पर सरकार उनके काम में हस्ताक्षेप करती है और असमर्थ अथवा अयोग्य राजा को गद्दी से उतार उसका स्थान किसी योग्य देशी व्यक्ति को ही दे देती है। जब किसी राजा के सन्तान न हो तो वारिस मुतबन्ना करने अर्थात् गोद लेने की इजाजत दी जाती है। वारिस की नाबालगी (अल्पावस्था) की हालत में सरकार देशी राज्य में सुधारार्थ परिवर्तन करती है, पर उन्हें अपने राज्य में नहीं मिला लेती। इन रियासतों को इस बात की अनुमति नहीं रहती कि सरकार अंग्रेज़ी की आज्ञा बिना परस्पर एक दूसरे राज्य से अथवा किसी विदेशी राज्य से किसी प्रकार का राजनैतिक व्यवहार कर सकें।

दशम परिच्छेद

फ़ौज और पुलिस

यह संसार कैसा सुखमय हो यदि इसमें लोगों का परस्पर द्वेष, ईर्षा व झगड़े टंटे न हुआ करें; और समस्त प्राणी भ्रातृ-भाव से रहते हुए, एक दूसरे के दुख दूर करते हुए, सार्वजनिक हित का ध्यान रक्खा करें। परन्तु ऐसी स्थिति न होने से यह आवश्यक हो गया है कि देशोन्नति के लिए उसकी बाहरी दुशमनों से रक्षा की जावे एवं अन्दर भी शान्ति-

भंग न हो। इस वास्ते वर्तमान समय में निम्न लिखित उपाय काम में लाये जाते हैं—

१—जलसेना

२—स्थलसेना

३—पुलिस

१—जल सेना। भारतवर्ष पूर्व, पश्चिम और दक्षिण में समुद्र से घिरा हुआ है। प्राचीन काल में समुद्र स्वतः देश का रक्षक होता था। परन्तु १५वी १६वीं शताब्दी के पश्चात् से पाश्चात्य राष्ट्रों ने नाविक विद्या में प्रवीणता प्राप्त कर अपनी अपनी जलसेना बढ़ाई, तबसे विशेष आक्रमण की आशंका समुद्र की ही ओर से रहने लगी और यहां जलसेना रखने की आवश्यकता हुई। आरम्भ में यह काम कम्पनी के व्यापारिक जहाज़ ही कर लिया करते थे।

भारतवर्ष की जलसेना अब तीन प्रकार की है।

वर्तमान स्थिति

(क) इंगलैंड की विशाल सामुद्रिक सेना का एक भाग उन समुद्रों में रहता है जिनमें से होकर ही कोई शत्रु भारतवर्ष में आ सके।

(ख) समुद्र-रक्षा के लिए जलसेना का दूसरा भाग वह है जो ख़ास भारतवर्ष के समुद्रों में जंगी जहाज़ व तोपों से सुसज्जित हर समय तय्यार रहता है।

(ग) तीसरे भाग में भारत-सरकार के अधीन वे जहाज हैं जो हिन्दुस्तानी मल्लाहों द्वारा यहां के वन्दरों की रक्षा करते और ज्वार-भाटा-वाली नदियों में फिर कर सेना पहुंचाते हैं।

२—स्थलसेना। भारतवर्ष के इतिहास में उल्लेखनीय आक्रमण उत्तर-पश्चिम से ही हुए हैं। अब भी इधर रूस-राज्य की सीमा बढ़ी आ रही है, परन्तु यह सरकार अंग्रेज़ी का मित्र है, और इस ओर से रक्षा के निमित्त अफ़्गानिस्तान, फ़ारिस, कश्मीर तथा अन्य रियासतों से संधि की हुई है कि वे विदेशियो के आक्रमण को यथाशक्ति रोकने की चेष्टा करें, जिससे उस आक्रमणकारी को पहिले भारत-सीमा से बाहर ही अपनी शक्ति व्यय करनी पड़े और भारत-सरकार को यथा-समय सूचना मिल जावे।

पश्चिमोत्तर सीमा

ठेठ उत्तर में भारत-रक्षा की विशेष चिन्ता नही। हिमाचल की ऊंची दिवार एक अजेय सेना का काम कर रही है, और इस ओर केवल नैपाल भूटान ही ऐसे राज्य है जो ख़ास सरकार अंग्रेजी के अधीन नहीं है; परन्तु परस्पर संधि से ये भी सरकार के सहायक है।

उत्तर सीमा

इस ओर सरकारी राज्य बर्मा की परली सीमा तक फैला हुआ है, तथा चीन व फ्रांसीसी राज्यों से सम्बन्ध रखता है। इनसे भी सरकार ने यथेष्ट संधि करली है और आक्रमण का कोई भय नही है। परन्तु इस प्रकार भय-रहित होने पर सरकार (केवल संधियों के सहारे) चुप नही बैठी है। उसके पास एक बड़ी भारी सेना है जिसकी वर्तमान स्थिति का आगे उल्लेख किया जावेगा। परन्तु पहिले उसका कुछ इतिहास जान लेना चाहिए।

पुर्वोत्तर सीमा

सन् १७४६ ई० में फ्रांसीसियों से कम्पनी की बस्तियों की रक्षा हेतु मेजर लौरेन्स ने पहिले पहिल सिपाहियों से काम लिया। सन् १७८१ ई० में पार्लिमेंट के ऐक्ट से ईस्ट इंडिया कम्पनी को सिपाही भरती करने व फ़ौज रखने का अधिकार मिल गया और बम्बई, बंगाल, मद्रास अहातों में अलग अलग सेनाएं रहने लगीं। इनके अतिरिक्त देशी रियासतें भी अपने अपने खर्च से पलटनें रखती थीं। बंगाल व बम्बई की फ़ौजों में अवध व पश्चिमोत्तर प्रदेश के ब्राह्मण और राजपूत भरती किये जाते थे; मद्रास और पीछे पंजाब में वहीं के लोगों की सेना काम करती थी। तोपखाना भी बहुधा देशी आदमियों के ही हाथ में रहता था।

स्थल-सेना की आरम्भिक स्थिति

स्थल-सेना के संगठन में क्रमशः क्या क्या परिवर्तन हुए, उन सबके उल्लेख की आवश्यकता नहीं। इतना जान लेना चाहिए कि अब प्रान्तिक सरकारों के अधीन पृथक् सेना नहीं रहती, वरन् सब भारत सरकार की निगरानी में रहती है, और जंगी-लाट बड़ी कार्यकारिणी कौंसिल में इसके प्रतिनिधि होते हैं। कुछ सेना तो पूर्व और पश्चिम के सीमा प्रान्तों में रहती है और शेष यत्र तत्र स्थित छावनियों में, जहां से आवश्यकता अनुसार सुगमता पूर्वक एकत्र की जा सकती है। इसमें दो लाख पचीस हजार आदमी होते हैं जिनमें से एक तिहाई युरोपियन हैं। सन् १८५७ ई० के उपद्रव से पहिले युरोपियन कुल सेना का प्रायः पांचवां हिस्सा होते थे।

वर्तमान स्थिति

देशी रियासतों से इस प्रकार की संधि हुई है कि वे

भी देश-रक्षा में सहायता दें। बड़ी बड़ी रियासतें (जिनमें कश्मीर, पटियाला, वहावलपुर, झिन्ध, नाभा, अलवर, भरतपुर, जोधपुर, ग्वालियर, भूपाल, इन्दौर, हैदराबाद, मैसूर, बीकानेर आदि मुख्य हैं) सरकारी कर्मचारियों के अधीन पलटनें रखती हैं। इन्हें इम्पीरियल सर्विस (Imperial Service) की सेना कहते हैं। इनकी संख्या पन्द्रह हजार के लगभग है।

इनके अतिरिक्त वालंटियर (स्वयं-सेवक) भी हैं जो किसी विशेष स्थान में रहते हुए अपना निज का काम करते रहते है और आवश्यकता होने पर हथियारबन्द हो जाते हैं। इनकी संख्या २९ हजार है जिसमें अधिकांश युरोपियन, युरेशियन व ईसाई लोग ही हैं।

सेना-विभाग का व्यय कैसे घटे

अकेले सेना-विभाग में तमाम आय के एक तिहाई रुपयो से ज्यादा खर्च बैठता है। इतने अधिक व्यय को कम करने के लिए क्या क्या उपाय काम में लाने चाहिएं, यह एक बड़ा गूढ़ परन्तु आवश्यक प्रश्न है। अनेक वार इसके लिए आन्दोलन हुए, पर अभी तक तो यह बढ़ता ही जा रहा है। इस विषय में हम यहां दो एक मोटी मोटी बातों का ही उल्लेख करेंगे।

इंगलैंड-निवासियों की भारत में सफलता प्राप्ति का प्रधान कारण यह है कि उन्होंने भारतीयों के हृदय में स्थान कर लिया है—भविष्यद् में भी ऐसा ही रहना चाहिए। अन्यान्य बातों में प्रजा को यह निश्चय रहना चाहिए कि अंग्रेज़ी शासन सबसे अधिक सस्ता व शान्तिमय है और हम सरकार के विश्वासपात्र हैं। यह समझौती शासन-

कार्य में बहुत सुविधाजनक होती है, और वेतनभोगियों की अपेक्षा कहीं अधिक काम प्रजा में विश्वासोत्पादन द्वारा लिया जा सकता है। यह विचार रखते हुए ऐसी व्यवस्था सोची जा सकती है जिससे थोड़े खर्च से ही उचित देश-रक्षा-प्रबन्ध हो जाय। उदाहरणतः—

(१) प्रत्येक युरोपियन सैनिक का वार्षिक व्यय बारह सौ रुपए और हिन्दुस्तानी का ४००) रु० होता है, इसलिए युरोपियनों की संख्या कमती करनी चाहिए। साथ ही उन्हें जल्दी जल्दी बदलना न चाहिए, क्योंकि उनके आने जाने का सब व्यय भारत-सरकार को ही देना पड़ता है; फिर उनके अनुभव से भी देश को यथेष्ट लाभ नहीं होता है।

(२) प्रत्येक भारतीय सैनिक को अब प्रायः १५ वर्ष नौकरी करनी होती है। यह अवधि घटा देनी चाहिए। इस प्रकार फ़ौज की नौकरी छोड़े हुए देशीय वीरों की एक बड़ी भारी रिज़र्व (Reserve) संख्या रह सकती है जो आवश्यकता होने पर देश-रक्षा ऐसी जी जान से करेगी कि कोई वेतनभोगी सेना क्या कर पावेगी। फिर वेतनभोगी सेना का व्यय आधा या तिहाई भी कर दिया जाय तो कोई चिन्ता न रहेगी।

(३) वीर नवयुवकों को युद्धशिक्षा तथा अच्छे अच्छे शस्त्र देकर नगर नगर में चोरी व डाकों के रोकने का प्रबन्ध हो सकता है। फिर पुलिस की भी इतनी आवश्यकता न रहेगी, और थोड़े ही खर्च से काम चल जावेगा।

(४) इस बात की घोषणा बारम्बार हो चुकी है कि सरकार किसी धर्म व जाति-विशेष का पक्षपात नहीं करती;

फिर न मालुम क्या कारण है कि हिन्दू व मुसलमान यथेष्ट संख्या में स्वयंसेवक नहीं रक्खे जाते ? इन भारतीयों को अपनी योग्यता दर्शाने का अवसर व सौभाग्य अवश्य प्राप्त होना चाहिए।

३—पुलिस। जिस प्रकार जल व स्थल सेना का कर्तव्य देश को बाहर के शत्रुओं से बचाना है, उसी भांति पुलिस रखने का अभिप्राय यह होता है कि देश के अन्दर शान्ति रहे, चोर डाकू उपद्रव न मचावें, और दोषियों को यथोचित् दंड दिया जावे।

आरम्भिक इतिहास

ब्रिटिश सरकार के आगमन के पूर्व प्रत्येक गांव या शहर अपनी रक्षा का स्वतः प्रवन्ध करता था। शहरों मे कोतवाल, व गांवों में चौकीदार व लम्बरदार नियत थे। जहां बड़े बड़े जमींदार थे, वहां उनके अधीनस्थ छोटे किसान यह कार्य सम्पादन करते थे। शक्तिशाली मुग़ल सम्राटों के समय में भी यही प्रबन्ध रहा, परन्तु पीछे इस पद्धति से काम चलना कठिन हो गया। कम्पनी के समय में कुछ अंश में परिवर्तित प्राचीन प्रणाली से ही काम लिया गया, व निगरानी का विशेष प्रबन्ध कर दिया गया। ज़मींदारों से यह उत्तरदायित्व का कार्य हटा कर उनके स्थानापन्न युरोपियन मैजिस्ट्रेट बनाये गये और पुलिस के प्रबन्धार्थ जमींदारों पर कुछ भूमि-कर बढ़ाया गया। प्रत्येक ज़िले में बीस बीस वर्ग मील के थाने बना दिये गये। एक एक थाने पर एक एक दारोगा नियत किया गया। दारोगाओं को यह अधिकार दिया गया कि वे सरकारी खर्च से कुछ कान्सटेबल (Constables) रख सकें। इस प्रकार ज़िले के प्रधान

कर्मचारी के मातहत वेतन-भोगी पुलिस रखने की पद्धति आरम्भ हुई।

वर्त्तमान पुलिस

समस्त प्रान्तों की पुलिस का जोड़ अब दो लाख के लगभग है और उस पर छः करोड़ रुपए से अधिक वार्षिक खर्चा बैठता है। कुछ 'अधिक' पुलिस ऐसी भी रक्खी जाती है जिससे केवल आवश्यकता होने पर ही काम लिया जाता है; इसका व्यय समस्त प्रान्त पर नहीं पड़ता, वरन् उस स्थान के लोगों को ही देना होता है जहां यह रक्खी जावे। इसके अतिरिक्त जब किसी स्थान पर नया अधिकार किया जाता है या जब कहीं विशेष उपद्रव होता है तो वहां शान्ति स्थापनार्थ 'फ़ौजी' पुलिस भेजी जाती है जिनके पास भयानक हथियार होते हैं; इसकी संख्या सवा दो हजार है और इसका विशेष भाग बर्मा में रहता है।

संगठन

अधिकांश प्रान्तों में पुलिस स्थानीय सरकार के अधीन रहती है। इस विभाग का प्रधान इन्स-पेक्टर-जनरल कहलाता है। वह या तो पुलिस-अफ़सर या इंडियन सिविल सर्विस का मेम्बर होता है। उसके अधीन डिप्टी (Deputy) इन्सपेक्टर-जनरल होता है।

प्रत्येक ज़िले में एक सुपरिंटेंडेंट पुलिस रहता है; यह डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट के अधीन रहता है और ज़िले के शान्ति प्रबन्ध का उत्तरदाता होता है। इसके एक या अधिक सहायक या डिप्टी रहते हैं। सहायक सुपरिंटेंडेंट इंगलैंड में भरती होते हैं। इसके लिए वहां एक मुक़ाबले की परीक्षा होती है जिसमें ब्रिटिश प्रजा के केवल युरोपियन लोग ही

बैठ सकते हैं। विशेष हालतों में इस पद के लिए हिन्दुस्तान में भी नियुक्ति हो सकती है। डिप्टी सुपरिंटेंडेंट हिन्दुस्तान में ही नियुक्ति से अथवा तरक्की से भरती होते हैं।

पुलिस-प्रबन्ध के लिए जिला कई एक सर्कलों (Circles) में विभक्त होता है जहां इन्सपेक्टर नियुक्त रहते हैं। पुनः सर्कल और भी छोटे छोटे भागों में विभक्त रहता है, जिनमें से प्रत्येक में एक अधीन कर्मचारी (प्रायः अधीन इन्सपेक्टर) के सुपुर्द एक पुलिस स्टेशन होता है। पुलिस स्टेशन का औसत क्षेत्रफल २०० वर्ग मील है। कुछ पुलिस घुड़सवार भी होती है।

हिन्दुस्तान के ग्रामों में सर्वत्र प्राचीन समय की 'चौकीदारी'-पद्धति चली आ रही है। ये चौकीदार प्रायः लम्बरदारों की निगरानी में रहते हैं और इन्हें या तो कुछ बे-लगान (Rent Free) ज़मीन मिली रहती है या ज़मीन के महसूलो से वेतन मिलती है। ये पुलिस कर्मचारियों के अधीन नहीं रहते वरन् कलेक्टर या डिप्टी कमिश्नर के अधीन होते हैं। स्थानीय अपराधों की खोज मे इनकी सेवा बड़े महत्व की है; परन्तु इनकी स्थिति संतोषजनक नहीं है और इनका उत्साह बढ़ाया जाना चाहिए।

पुलिस और प्रजा

पुलिस का काम है देश की आन्तरिक अशान्ति को हटाना, प्रजा की जान माल की रक्षा करना और जनसमाज की सेवा करना। अतः यह स्पष्ट है कि पुलिस और प्रजा में घनिष्ट सम्बन्ध रहना चाहिए। यह दुर्भाग्य की बात है कि यहां कर्मचारियों को सदैव यह शिकायत रहा करती है कि प्रजा उनके काम

में सहायता नहीं देती। परन्तु असल बात यह है कि जन-साधारण उनको दूर से ही देख कर डरते हैं। अज्ञानतावश वे यह समझे हुए हैं कि पुलिस चाहे जिस पर जो कुछ कर सकती है और भले मानसों पर भी मुकद्दमा चला सकती है; इस लिए बहुतेरे अपने दुख पुलिस तक पहुंचाते ही नहीं, कि कहीं उलटे वे ही दोष के भागी न बना दिये जावें। परन्तु चाहे पुलिस के बहुत से कर्म्मचारी अपने कर्तव्य का यथोचित पालन न करें, उन्हें यह अधिकार कदापि नहीं है कि वे भले आदमियों को व्यर्थ ही मनमाना दुख दिया करें; वरन् वे कानून के अन्दर ही हैं, नियमभंग करने पर उन्हें भी दंड मिल सकता है। जब जनता को ये बातें विदित होंगी और पुलिसवाले अपने अधिकार-सीमा में ही काम करेंगे, कर्म्मचारियों की उपर्युक्त शिकायत न रहेगी और जनसाधारण पुलिस के काम में सहर्ष हाथ बटाएंगे, क्योंकि पुलिस का कार्य ऐसा है कि प्रत्येक आदमी उसमें सहायता दे सकता है किन्तु कर्त्तव्य पालन का ध्यान पुलिस अफ़सरों में कम होने के कारण वे लोगों से मिलने की कम परवा करते हैं। हमारे अनुमान में बहुत कम पुलिस अफ़सर ऐसे होंगे जिनका अच्छे आदमियों से अपने इलाक़े में मेल हो।

एकादशम् परिच्छेद

न्याय विभाग व जेल

क्योंकि पुर्तगाल से बम्बई को छोड़ कम्पनी को सब बस्तिएं यहां के ही राजाओं की अनुमति से मिली थीं, यह कल्पना हो जानी सहज है कि इसे इस देश के प्रचलित कानून

के अनुसार ही काम करना पड़ा होगा। परन्तु असल में यह बात न हुई; भिन्न भिन्न सनदों से कम्पनी को अंग्रेज़ी कानून द्वारा न्याय करने के अधिकार मिलते गये। सन् १६६१ ई० में द्वितीय चार्ल्स ने कम्पनी के अधीन भिन्न भिन्न स्थानों में दिवानी और फ़ौजदारी के सब मामलों में स्वजातीय कानून चलाने के निमित्त गवर्नर व कौंसिलें नियत कीं।

आरम्भिक स्थिति

सौ वर्ष पश्चात् सन् १७६५ ई० में फ़ौजदारी व दिवानी अदालतें व एक सुप्रीम (Supreme) कोर्ट स्थापित हुआ।

उपर्युक्त संस्थाओं में बीच बीच में परिवर्तन होते रहे। सन् १८६१ ई० में एक कानून पास हुआ जिससे क्राउन को कलकत्ते, मद्रास व बम्बई एवं पश्चात् इलाहाबाद में हाईकोर्ट स्थापित करने की अनुमति मिली। पूर्वोल्लिखित सुप्रीम कोर्ट तथा दिवानी फ़ौजदारी की अदालतें इन हाईकोर्टों में ही मिला दी गयीं। जजों की नियुक्ति का अधिकार इंगलैंड के सम्राट को मिला। इनमें कम से कम एक तिहाई स्काटलैंड के ऐडवोकेट व बैरिस्टर, इतने ही सिविल सर्विस के न्याय विभाग के मेम्बर और शेष हिन्दुस्तानी कानून-ज्ञाता रखने का नियम किया गया।

हाईकोर्टों का जन्म

हाईकोर्ट दिवानी व फ़ौजदारी, दिवाले व विवाह सम्बन्धी एवं वसीअतनामे के मुकद्दमों का (Original) प्रारम्भिक स्थिति में फैसला करते हैं और उनकी अपील सुनते हैं। प्रारम्भिक स्थिति के वे केवल अपने नगरों के ही मुकद्दमों का फैसला करते है। अपील सुनने के कारण एक प्रकार से वे अपने

उनके अधिकार

अपने नियमित क्षेत्र के सब दिवानी व फ़ौजदारी कोर्टों की निगरानी करते हैं। वे स्थानीय सरकारों की स्वीकृति से उनकी (Practice and Procedure) कार्यप्रणाली के साधारण नियम बना सकते हैं, कोर्ट के मोहर्रिर और अमीन आदि की फ़ीस ठहरा सकते हैं। वे किसी मुकद्दमे को या उसके अपील को एक कोर्ट से दूसरे उसके समान अथवा उससे बड़े कोर्ट में बदल सकते हैं, एवं कोर्टों की (Returns) लेखा मांग सकते हैं। प्रायः माल (लगान) सम्बन्धी मुकद्दमों का प्रारम्भिक स्थिति में हाइकोर्ट द्वारा फैसला होने का रिवाज नहीं है। इलाहाबाद के हाईकोर्ट को प्रारम्भिक स्थिति में केवल उन मुकद्दमों के सुनने का अधिकार है जो युरोपियन ब्रिटिश-प्रजा के विरूद्ध हों।

गवर्नर-जनरल, मद्रास, बंगाल व बम्बई के गवर्नर तथा उनकी कौंसिलों के मेम्बर अपने उक्त पद की हैसियत से काररवाई करें उसका विचार प्रारम्भिक स्थिति में हाईकोर्ट द्वारा नहीं हो सकता। हाईकोर्टों में नौ जजों की जूरी से फैसला होता है और वे कैद, जुर्माने, देश-बहिष्कार व फांसी इत्यादि का कोई भी हुक्म सुना सकते हैं, केवल वह कानून से व्यवस्थित होना चाहिए।

संगठन

सन् १८६१ ई० के ऐक्ट् से प्रत्येक हाईकोर्ट में एक चीफ़ जस्टिस और १५ तक जज रहा करते थे जितने कि क्राउन समय समय पर उचित समझे। परन्तु काम बढ़ता देख उपर्युक्त संख्या की सीमा संकुचित समझी गयी। इस लिए सन् १९११ ई० का इंडियन हाईकोर्ट ऐक्ट् पास किया गया। अब चीफ़ जस्टिस मिला कर सब जजों की संख्या २० तक हो सकती है, और

भारतवर्ष में अन्य हाईकोर्ट भी बनाये जा सकते हैं। चुनांचे अब विहार प्रान्त के लिए पटने में हाईकोर्ट बनने वाला है। पंजाब की बात तो कुछ ढीली पड़ गयी।

चीफकोर्ट व कमिश्नरों के कोर्ट

उक्त चार हाईकोर्टों के अतिरिक्त व सरकारी भारत में इनकी सीमा से बाहर अब दो चीफ़ कोर्ट हैं। पंजाब का चीफ़कोर्ट सन् १८६६ ई० में और लोअर बर्म्मा का सन् १९०० ई० में स्थापित हुआ था। अवध, मध्य प्रान्त, पश्चिमोत्तर सीमा प्रदेश, अपर बर्मा, कुर्ग, बरार व सिंध मे जुडिशल कमिश्नरो के कोर्ट हैं। इन "बिना सनदों के हाइकोर्टों" के अधिकार वैसे ही हैं जैसे उपर्युक्त सनदवाले हाईकोर्टों के। हां, हाईकोर्टों का न्याय उच्च कोटि का होने से अधिक सन्तोषप्रद व विश्वसनीय होता है।

रेवन्यू कोर्ट

आगे दिवानी व फ़ौजदारी के अधीन कोर्टों का वर्णन किया जायगा। उनके अतिरिक्त रेवन्यू (मालगुजारी) के कोर्ट हैं, जिनके अध्यक्ष मालगुजारी वसूल करनेवाले अफ़सर ही रहते हैं। ज़मीन के अधिकार का निर्णय करना तो दिवानी के कोर्टों के अधीन है। शेष, मालगुजारी-सम्बन्धी सब मामलों का फैसला रेवन्यू कर्मचारी ही करते हैं।

दिवानी के अधीन-कोर्ट

हाईकोर्टों के नीचे दिवानी व फ़ौजदारी के अधीन-कोर्ट (Subordinate Courts) हैं। दिवानी की अधीन अदालतों के नाम व कार्यक्षेत्र सब प्रान्तो मे एक सरीखे नहीं हैं। साधारणतया बड़े बड़े प्रान्तों की इन अदालतो का संगठन

मिलता जुलता है। इनमें जिन नियमों से काम होता है उनके संग्रह को सिविल प्रासिजर कोड (Civil Procedure Code) कहते हैं। प्रायः हर एक ज़िले में एक ज़िला जज (District Judge) है जो वहां की सब कचहरियों की निगरानी रखता है। उसकी अदालत दिवानी मामलों में ज़िले की और सब अदालतों से बड़ी होती है और उसमें छोटी (Lower) कोर्टों से अपील हो सकती है। ज़िला-जज के नीचे अधीन-जज होते हैं और उनके नीचे मुनसिफ़ या दूसरे दर्जे के अधीन-जज होते हैं। मुनसिफ़ों के पास १००० से ५००० रु० तक के मुकद्दमें पेश होते हैं और अधीन जजों के पास किसी भी रक़म तक के दिवानी मुकद्दमें आ सकते हैं। परन्तु ज़िला जज के सामने प्रारम्भिक स्थिति में दस हज़ार रु० से अधिक का मुकद्दमा पेश नही हो सकता यद्यपि अधीन-जज व मुनसिफ़ के छोटे मुकद्दमों की अपील वहां हो सकती है।

ज़िला-जज व अधीन जज के दस हजार से अधिक के फैसलों की अपील हाईकोर्ट में होती है। प्रेजीडेन्सी शहरों तथा अन्य कुछ स्थानों में स्माल-क़ौज-कोर्ट (Small Cause Court) वा अदालत ख़फ़ीफ़ा स्थापित हैं जो छोटे छोटे मामलों में जल्दी व कम खर्च से अन्तिम निर्णय सुना देते हैं।

फ़ौजदारी के अधीन-कोर्ट

फ़ौज़दारी के नियम-संग्रह को क्रिमिनल प्रासिजर कोड (Criminal Procedure Code) कहते हैं। प्रत्येक ज़िले में व ज़िलों के एक समूह में एक सेशन (Sessions) कोर्ट रहता है। इसका प्रधान भी ज़िला-जज ही होता है जो फ़ौजदारी के

अधिकारों की हैसियत से सेशन जजी का कार्य सम्पादन करता है। उसे अन्य सहकारी अथवा सहायक सेशन जजों से इस काम में सहायता मिल सकती है। फ़ौजदारी मामले में सेशन कोर्टों के अधिकार हाईकोर्टों सरीखे ही हैं; हां, मृत्यु सम्बन्धी हुक्म हाईकोर्ट से अनुमोदित (Confirm) होना चाहिए। इनमे फैसला जुरी (Jury) या असेसरों (Assessors) से होता है जो अपनी सम्मति से जज को सहायता पहुंचाते हैं, पर उसे उस सम्मति पर चलने के लिए वाध्य नहीं कर सकते।

मैजिस्ट्रेट और उनके अधिकार

सेशन जजों के नीचे प्रथम, द्वितीय व तृतीय श्रेणियों के मैजिस्ट्रेट रहते हैं। प्रेसिडेन्सी-शहरों मे 'प्रेसिडेन्सी मैजिस्ट्रेट'; छावनियों में 'छावनी-मैजिस्ट्रेट' एवं कुछ शहरों में आनरेरी (Honorary) या अवैतनिक प्रथम, दूसरे या तीसरे दर्जे के मैजिस्ट्रेट रहते हैं। इनमें से छावनी मैजिस्ट्रेट फ़ौजी अफ़सर ही होते हैं।

प्रेसिडेन्सी-मैजिस्ट्रेटों तथा अव्वल दर्जे के मैजिस्ट्रेटों को दो साल तक की क़ैद व एक हज़ार रुपए तक का जुर्माना करने का अधिकार होता है। जिन मुकद्दमों का फ़ैसला ये नहीं कर सकते उन्हें हाईकोर्ट में भेज देते है। दूसरे दर्जे के मैजिस्ट्रेट छः मास तक की क़ैद और दो सौ रुपए तक जुर्माना कर सकते हैं। तीसरे दर्जे के मैजिस्ट्रेट एक मास की क़ैद व पचास रुपए तक जुर्माना कर सकते है। छावनी मैजिस्ट्रेट फ़ौजदारी मामलों का प्रारम्भिक स्थिति में विचार करते है। कतिपय प्रान्तों में क्षुद्र मामलों का निपटारा गांव के मुखिया ही मैजिस्ट्रेट की हैसियत से कर देते है।

युरोपियन ब्रिटिश प्रजा

ज़िला जज व सेशन जज न होने की हालत में कोई हिन्दुस्तानी जज या मैजिस्ट्रेट किसी युरोपियन सरकारी प्रजा पर अभियोग नहीं चला सकता। और जब सरकारी प्रजा का कोई युरोपियन अभियुक्त ज़िला मैजिस्ट्रेट या सेशन जज के सामने पेश हो तो उसे अधिकार है कि वह अपने मुकद्दमे का फैसला ऐसी जुरी द्वारा करा सके जिसमें आधे से कम युरोपियन या अमरीकन न हों। सन् १८७२ ई० से पहिले सरकारी प्रजा के युरोपियन लोगों पर केवल हाईकोर्ट में ही अभियोग चलाया जा सकता था; इससे बहुत अड़चन पड़ने के कारण सन् १८८४ ई० में उक्त अधिकार हिन्दुस्तानी मैजिस्ट्रेटों और जजों को दिये जाने का विचार हुआ। इस प्रस्ताव का युरोपियन लोगों ने ऐसा घोर विरोध किया कि भारत सरकार उसे लौटा लेने पर वाध्य हुई और पूर्व स्थिति यथावत् बनी रही। हम इस बात के उत्सुक हैं कि ब्रिटिश न्याय की उज्ज्वलता भली भांति दीप्यमान हो और उसमें गोरे काले वा युरोपियन हिन्दुस्तानी का भेद-रूपी जो धब्बा है वह शीघ्र दूर हो।

अपील पद्धति

यहां के वर्तमान कानून में अपील की गुंजाइश बहुत रहती है। दूसरे और तीसरे दर्जे के मैजिस्ट्रेटों के फैसले के विरुद्ध ज़िले के मैजिस्ट्रेट के सामने अपील हो सकती है और अव्वल दर्जे के मैजिस्ट्रेट के फैसले की अपील सेशन कोर्ट में चल सकती है। जिन मनुष्यों को मुकद्दमे की प्रारम्भिक स्थिति में सेशन कोर्ट ने दोषी ठहराया हो, उनकी अपील उस प्रान्त के

चीफ़-कोर्ट या हाईकोर्ट में हो सकती है। जब मृत्यु का हुक्म दे दिया जाता है तो प्रान्त के शासक व वाइसराय के पास दया के लिए अपील हो सकती है। ख़ास ख़ास हालतों में अपील प्रिवी कौंसिल तक भी पहुंच सकती है। अपील उस समय होती है जबकि अभियुक्त या तो यह समझता है कि प्रमाण में कुछ कसर रह गयी, या उसके विचार से ठीक न्याय न हुआ हो व फैसले में अधिक सख़्ती हुई हो। जब कोई अभियुक्त छूट जाता है तो सरकार को अधिकार है कि उस के विरुद्ध हाईकोर्ट या चीफ़-कोर्ट में अपील करे, और यदि यह प्रतीत हो कि यथोचित् न्याय नहीं हुआ है, तो उक्त कोर्ट इन मामलों पर पुनर्विचार कर सकते हैं।

दिवानी के मुकद्दमों में भी अपील के लिए कमती स्थान नहीं है। स्माल कौज़ कोर्ट के फैसलों को छोड़, मुंसिफ के फैसलों की अपील ज़िला जज के पास हो सकती है और यदि वह चाहे तो उसे अधीन-जज के पास भेज सकता है। इसी प्रकार अधीन-जज व ज़िला जज के फैसलों की अपील हाईकोर्ट में और पुनः ख़ास ख़ास हालतों में उनके फैसले की अपील प्रिवी कौंसिल की विचार-समिति (Judicial Committee) में हो जाती है।

मुकद्दमों का हिसाब

दिवानी के मुकद्दमों की वार्षिक औसत बीस लाख से ऊपर बैठती है। लगान सम्बन्धी मुकद्दमें (जो बंगाल आसाम तथा मध्य प्रान्त की संख्याओं को बहुत बढ़ाये हुए हैं) छोड़ सन् १९११ ई० में फी दस हजार आदमियों ने निम्नलिखित संख्या में मुकद्दमे लड़ाये—

बंगाल	४५	मध्य प्रान्त और बरार	८२
पूर्वी बंगाल और आसाम	७७	बर्मा	६६
संयुक्त प्रान्त	४०	मद्रास	१०३
पंजाब	६१	बम्बई	६६

सरकारी भारत ६७

इन मुकद्दमों में अधिकतर धन व जङ्गम जायदाद सम्बन्धी है। शेष विशेषतया स्थावर जायदाद और रहन (Mortgage) के हैं। पुनः पहिलों में आधे से अधिक ५०) रु० से कम के थे और बहुतेरे तो १०) रु० अधिक के न थे। (क्या ऐसे छोटे छोटे मामलों में भी कचहरियों की शरण लिये बिना काम नहीं चल सकता ?) एक हजार रुपयों से ऊपर के मुकद्दमें केवल २५५.० थे। स्माल कौज़ कोर्टों में, जहां कि छोटे छोटे ऋण जल्दी व कम खर्च से वसूल हो जाते हैं, दायर मुकद्दमें की संख्या ढाई लाख से ऊपर थी; दस वर्ष पहिले यह दो लाख से कम थी। अपीलों की संख्या सन् १६११ व १६०१ ई० में क्रमशः डेढ़ वा सवा लाख के लगभग थी।

फ़ौजदारी मुकद्दमों की संख्या में गत दस वर्षों में विशेष वृद्धि नहीं हुई। सन् १६११ ई० में 'सच्चे' मुकद्दमों (जितने अपराध लगाये गये उनमें से झूठे प्रमाणित हुए हुओं की संख्या निकाल कर बाक़ी रहे हुओं) की संख्या १२,२०,२८२ रही और सन् १६०१ ई० में इनकी संख्या ११,२१,५३१ थी। यह ८.८ फ़ी सदी की बढ़ती बहुत नहीं कही जा सकती, जब हम देखते हैं कि इतने समय में

जन-संख्या ही ५॥ फी सदी के हिसाब से बढ़ गयी। परन्तु विना बढ़े ही क्या उक्त संख्या थोड़ी है ?

भारतवर्ष में
मुकद्मेबाजी

भारतवर्ष में एक वह समय था जब लोग मुकद्मेबाज़ी को घृणित निगाहों से देखते थे और अब यह ख़र्चीला काम दिनों दिन बढ़ता ही जा रहा है। घटने की तो कोई सूरत ही नज़र नही आती। यद्यपि सरकारी तौर पर इसका कारण जनता में सभ्यता और शिक्षा का प्रचार बतलाया गया है, हमारा हृदय इसे गौरवसूचक स्वीकार करने से साफ इन्कार करता है। विचारना चाहिए कि कहीं इस मुकद्मेबाज़ी की बढ़ती के क्या क्या कारण हैं, एवं इसे रोकने के लिए क्या उपाय अवलम्बनीय हैं जिससे दरिद्र लोगों का इससे छुटकारा हो। यह बात अब छिपी नही है कि यहां न्याय बहुत महँगा है और कोर्ट फीस आदि का खर्च बहुत अधिक है। साथ ही वर्तमान शैली से मुकद्मों के फैसलों में बड़ी देर लगती है, साधारण छोटे छोटे मामले मुद्दतों तक लटकते रहते हैं। मुकद्मेबाज़ी के कष्टदायक अनुभव का अनुमान वे ही कर सकते है जिन्हें दुर्भाग्य से कचहरियों में काम पड़ा हो। इस लिए प्राचीन पंचायत-प्रणाली की ओर हम पुनरपि अपने पाठकों का ध्यान दिलाना चाहते है।

जेल (Jails)

दंड देने के तीन उद्देश्य होते हैं—

दंड देने के उद्देश्य
और उसके भेद

(१)—जिस व्यक्ति को दंड मिले, उसके आचरण का सुधार।

(२)—जनता को शिक्षा देना जिससे वे ऐसे कार्यों को करने से रुकें।

(३)—जिसके प्रति कुव्यवहार हुआ हो उसे या उसके सम्बन्धियों को संतोष दिलाना। भारतवर्ष में फ़ौजदारी मुकद्दमों के लिए भारतीय दंड संग्रह (Indian Penal Code) से निम्नलिखित सज़ाएं नियत हैं—

(क)—प्राणदंड (फांसी या सूली)।

(ख)—देश-वहिष्कार या कालापानी।

(ग)—सख्त् क़ैद, जिसमें थोड़े दिन की एकान्त की बंदी भी शामिल है।

(घ)—सादी कैद। दिवानी मुकद्दमों के क़ैदी अथवा ऐसे क़ैदियों को भी जिन पर मुकदमा चल रहा हो, जेल में रहना पड़ता है।

जेलों के तीन भेद हैं—

जेलों के भेद

१—सेंट्रल जेल (Central Jail), इनमें साल भर के क़ैदी रहते हैं।

२—जिला-जेल। इनमें १५ दिन से लेकर साल भर तक के क़ैदी रहते है।

३—छोटे जेल या हवालात। इनमें वे आदमी रहते हैं जिन पर मुकदमा चल रहा हो, या जिन्हें १५ दिन से कम की सजा हो। सन् १९११ ई० में इन जेलों की संख्या क्रमशः ४१,१८८ तथा ५२४ थी।

सन् १८९४ ई० से पहिले भिन्न भिन्न स्थानों के जेलों के

जेलों का संगठन

नियम तथा प्रवन्ध आदि में बहुत अन्तर था। उस वर्ष के ऐक्ट से सब जेलों में मोटी मोटी बातों में समानता लायी गयी। अब प्रत्येक स्थानीय

सरकार के अधीन एक इन्स्पेक्टर-जनरल रहता है जो अपने प्रान्त के सब जेलों की निगरानी रखता है। यह कर्मचारी इंडियन मेडिकल (औषध सम्बन्धी) सर्विस का मेम्बर रहता है।

प्रत्येक जेल में चार कर्मचारी रहते हैं—

१—सुपरिंटेंडेंट, जो साधारण प्रबन्ध ख़र्च व क़ैदियों की मेहनत व सज़ा की निगरानी करता है।

२—मेडिकल आफिसर, स्वास्थ्य आदि का ध्यान रखने के लिए।

३—अधीन-मेडिकल आफ़िसर।

४—जेलर (Jailor)

इनमें से पहिले दो काम एक ही कर्मचारी के सुपुर्द हो सकते हैं और साधारणतया होते भी हैं। बहुत से जिला-जेल तथा कुछ अन्य जेल सिविल-सर्जनों की ही देख रेख में रहते हैं। Warders यानी जेल के पहरुए और Convict Officers का काम प्रायः अपराधियों से ही ले लिया जाता है जिससे उन्हे अपने आचरण सुधारणार्थ प्रलोभन मिले।

कैदियों का रहन सहन

सन् १८९४ ई० के ऐक्ट में एक प्रस्ताव यह भी था कि क़ैदियों को यथा-सम्भव पृथक पृथक कोठरियों में रक्खा जावे; परन्तु आर्थिक कठिनाइयों के कारण यह सुधार धीरे धीरे काम में लाया जा रहा है*। स्त्रियों को मर्दों से अलग रखा

---

*हम समझते हैं कि वास्तविक सुधार तभी हो सकता है जब उपदेश, शिक्षा, तथा आदर्श आदि द्वारा कैदियों के मनोविकारों का संस्कार किया जावे।

जाता है; एवं १८ वर्ष से कम उमर के क़ैदियों को बूढ़ों से पृथक रखने की व्यवस्था की जाती है। उनके आचरण पर नम्बर दिये जाते हैं और अच्छे व्यवहार से उनकी सज़ा कम हो सकती है। क़ैदियों को प्रायः जेल के अहाते में ही जेल की नौकरी, मरम्मत अथवा कारख़ाने आदि का काम करना होता है। सन् १६११ ई० में कुल मिलाकर ४,५२,४८६ मर्द और १८,०२४ स्त्रिएं क़ैदी हुईं। काम करनेवाले क़ैदियों में २१ फी सदी नौकरी में और ४० फी सदी कारख़ानों में थे।

छोटे अपराधी

१५ वर्ष से कम के बालक या तो शिक्षा-विभाग के अधीन किसी सुधार (Reformatory School) पाठशाला में भेजे जाते हैं, जिसमें शिक्षा पाकर वे किसी उद्योग धन्धे के योग्य हो जावें, या उन्हें ताड़ना देकर माता पिता की ही वंदी में दे दिया जाता है। क़ैदियों में लड़कियों की संख्या अल्प है, और मैजिस्ट्रेटों को इस बात की हिदायत भी मिली हुई है कि बने जहां तक अपराधी लड़कियों को धमका कर व समझा कर उनके संरक्षकों के ही सुपुर्द कर दें। सुधार पाठशालाओं की संख्या सन् १६११ ई० में ७ थी, जिनमें १३१२ बालक शिक्षा पाते थे।

काले पानी की सज़ावाले

हिन्दुस्तान में जिन लोगों को देश निकाले की सज़ा जन्म भर के लिए या कम से कम ६ वर्ष के लिए होती है, उन्हें अन्दमान टापू में पोर्ट ब्लेयर स्थान पर भेज दिया जाता है। वहां एक सुपरिंटेंडेंट तथा कुछ उसके सहायक कर्मचारी होते हैं। सन् १६१२ ई० में पोर्ट ब्लेयर में अपराधियों की कुल संख्या ११,२३५ थी, जिनमें ६०२ औरतें थी। देश-बहिष्कृत आदमी के जीवन में पांच दर्जे नियत किये गये हैं; जब वह

तरक्की करके एक दर्जे से दूसरे दर्जे में प्रवेश करता है तो उसके काम की सख्ती कम कर दी जाती है। अच्छे व्यवहार वाले अपराधी को अव्वल दर्जे में पहुंच जाने पर एक (Certificate) प्रमाण-पत्र मिलता है, जिससे वह कुछ ज़मीन लेकर स्वतः अपना निर्वाह कर सकता है, हिन्दुस्तान से अपने घर के आदमियों को बुला सकता है, अथवा वहां ही किसी अपराधी स्त्री से विवाह कर सकता है। सन् १९११ में ऐसे आत्मावलम्बी आदमी व स्त्रियों की संख्या क्रमशः १,५९६ व २७२ थी।

द्वादश परिच्छेद

शिक्षा प्रचार

प्राक्-कथन

देश की उन्नति और सभ्यता का अन्दाज़ा लगाने का एक साधारण उपाय यह है कि देखें कि वहां शिक्षा-प्रचार का कार्यक्षेत्र कितना विस्तृत है। यदि देश पैसेवाला न भी हो, परन्तु जनता सुशिक्षित हो, तो भरोसा रख लेना चाहिए कि वहां के निवासी भर पेट अन्न पा ही लेंगे और क्रमशः देश समृद्धिशाली भी हो ही जायगा। शासकों की भी इसीमें नेकनामी है कि उनकी प्रजा निपट मूर्खानन्द न रहे। बड़े बड़े राजनीतिज्ञों का कथन है कि शिक्षित प्रजा पर यद्यपि स्वतंत्रता-पूर्वक राज्य नहीं किया जा सकता, परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि शिक्षित देश में प्रजा के विद्वान् व्यक्ति शासकों के काम मे हिस्सा बटा कर शान्ति स्थापन में सहायक होते हैं।

यह कहना कि अंग्रेज़ों के आगमन से पूर्व भारतवर्ष में जनता की शिक्षा का प्रबन्ध न था, केवल यहां के इतिहास से अनभिज्ञता प्रगट करना है। क्योंकि भारतवर्ष में धर्म और शिक्षा-प्रचार का घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। जो जो धार्मिक लहरें यहां उठीं, उनसे यथाशक्ति शिक्षा-प्रचार का सदैव आन्दोलन होता रहा। वैदिक, बौद्ध, जैन व पौराणिक काल में इन मतों के प्रचारार्थ तक्षशिला, नालंद, औदन्त आदि विश्व-विद्यालयों के और मठों की गुरुकुल और ऋषिकुल प्रभृति संस्थाएं बराबर चलती रहीं। उनके अवशेष चिह्न रूप धार्मिक केन्द्रों में 'क्षेत्र' अब तक वर्तमान हैं। और हरिद्वार आदि स्थानों में प्राचीन सभ्यता की स्मृति दिलाते हुए गुरुकुल व ऋषिकुल सामयिक आवश्यकताओं को पूर्ण करने की चेष्टा कर रहे हैं।

अंग्रेज़ों के आगमन से पहिले की अवस्था

इसी प्रकार मुसलमानों ने भी अपनी मसजिदों में 'मकतब' चला कर धार्मिक संस्थाओं के साथ साथ शिक्षा-प्रचार का क्रम जारी रक्खा। व्यापार धन्धे वालों की भी अपनी अपनी पाठशालाएं होती थीं जिनमें साधारण लिखने पढ़ने के बाद व्यापारिक शिक्षण दिया जाता था। निदान अंग्रेज़ों के भारत में आने से पूर्व यहां प्रायः प्रत्येक ग्राम में ऐसी पाठशालाएं थीं जिनमें जन-साधारण के बालक बिना विशेष व्यय के शिक्षा पा सकते थे।

अट्ठारवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में युरोपियन लोगों का शिक्षा-क्षेत्र में प्रभाव पड़ने लगा। सबसे प्रथम इसाइयों ने इस काम में योग दिया, इनके द्वारा देशी भाषाओं से काम लिया

अंग्रेज़ों के आने पर आरम्भिक स्थिति

जाने लगा। कम्पनी ने आरम्भ में प्राचीन शिक्षा-प्रणाली ही प्रचलित रखने के निमित्त सहायता दी। सन् १७८१ ई० में कलकत्ते में फ़ारसी को प्रोत्साहन देने के लिए मदरसा खोला गया। दस वर्ष पश्चात् बनारस में संस्कृत विद्यालय स्थापित किया गया। सन् १८१३ ई० में गवर्नर-जनरल को शिक्षा-कार्य के लिए एक लाख रुपये वार्षिक व्यय करने की अनुमति हो गयी, तब भी शिक्षा-प्रणाली में कोई परिवर्तन नहीं किया गया। संस्कृत फारसी की ही उन्नति का विचार रहा। अंग्रेज़ी शिक्षा बढ़ाने के लिए सरकारी संस्थाएं यहां सन् १८३५ ई० से हुईं। जन-साधारण में शिक्षा का प्रचार हो और कम्पनी को यथेष्ट नौकर मिल जाया करे, इस अभिप्राय से एवं पाश्चात्य विज्ञान कला कौशल व साहित्यादि की उत्तेजना मिले, इस उद्देश्य से सरकार ने निम्नलिखित उपायों को काम में लाना उचित समझा--

(१) एक शिक्षा-विभाग स्थापित करना।

(२) प्रत्येक प्रान्त में लंदन विश्वविद्यालय के ढंग पर विश्वविद्यालय स्थापित करना।

(३) वर्तमान सरकारी स्कूल और कालिजों को सहायता देना और आवश्यकतानुसार उनकी संख्या बढ़ाते रहना।

(४) सब श्रेणी के स्कूलों के अध्यापकों के लिए ट्रेनिंग स्कूल खोलना।

(५) प्रारम्भिक शिक्षा के लिए देशी भाषा के स्कूलों पर अधिक ध्यान देना।

(६) ग्रांट अर्थात् साहाय्य-द्रव्य की प्रथा को जारी रखना।

वर्तमान समय में भारतवर्ष में पांच विश्वविद्यालय हैं जिनमें से (१) कलकत्ता, (२) बम्बई, (३) मद्रास के विश्वविद्यालय सन् १८५७ ई० में स्थापित हुए। चतुर्थ पंजाब का सन् १८८२ ई० में और पञ्चम इलाहाबाद का सन् १८८७ ई० में कायम हुआ। इन सबका काम परीक्षा लेना और प्रमाण-पत्र देना है, शिक्षा देना इनका कर्तव्य नहीं। इनमें से प्रत्येक में कुछ कालिज मिले हुए (affiliated) हैं। भिन्न भिन्न प्रान्तों में सन् १९१२ ई० में कालिजों की संख्या इस प्रकार थी—

विश्वविद्यालय

संयुक्त प्रान्त	में	४७
बंगाल	"	४६
मद्रास	"	३५
पंजाब	"	१९
बम्बई	"	१५
पूर्वीय बंगाल व आसाम	"	१५
मध्य प्रान्त	"	६
बर्मा	"	२

भारतवर्ष में (Residential) और शिक्षा देनेवाले विश्वविद्यालयों की आवश्यकता अनुभव होने लगी है। यह प्रणाली बनारस, अलीगढ़ और ढाके में बननेवाले विश्वविद्यालयों में चलाने का विचार है। शिक्षा की नित्य बढ़ती हुई मांग को देखते हुए वर्तमान विश्व-विद्यालय बिलकुल काफ़ी नहीं हैं। अत्यन्त आवश्यकता होने

से नागपुर, पटना और रंगून में भी विश्वविद्यालय स्थापन करने का विचार हो रहा है।

संगठन

विश्वविद्यालय के प्रधान को चान्सलर (Chancellor) कहते हैं। यह पद उस प्रान्त के मुख्य शासक को मिलता है जिसमें विश्वविद्यालय स्थापित है। प्रत्येक विश्वविद्यालय का अनुशासन एक सिनेट या मंत्री-सभा के अधीन रहता है। सिनेट का सभापति वाइस चान्सलर (उप-प्रधान) रहता है जो सरकार द्वारा नामज़द (नियुक्त) किया हुआ होता है। विश्वविद्यालय की कार्यकारिणी समिति को सिंडीकेट (Syndicate) कहते हैं। इसमें उक्त वाइस-चान्सलर तथा कुछ फैलो (Fellows) या सभ्य रहते हैं।

शिक्षा-विभाग

शिक्षा का साधारण अनुशासन भारत-सरकार के अधिकार में रहता है। उसकी बड़ी कौंसिल में शिक्षा-विभाग का भी एक सदस्य रहता है। प्रत्येक प्रान्त का शिक्षा-विभाग एक डाइरेक्टर के अधीन होता है जो स्वयं प्रान्तिक सरकार के अधीन होता है। डाइरेक्टर के अधीन हर एक डिवीज़न या सर्कल (Circle) में एक इन्स्पेक्टर और उसके सहायक रहते हैं जो स्कूलों का निरीक्षण करते हैं। प्रत्येक ज़िले में एक डिप्टी इन्स्पेक्टर होता है जो एक या अधिक अधीन-डिप्टी इन्स्पेक्टरों की सहायता से जिले के स्कूलों का निरीक्षण करता है।

शिक्षा-संस्थाएं

सन् १८५४ ई० से अंग्रेज़ी शिक्षा-प्रणाली की क्रमशः उन्नति हो रही है। नीचे के हिसाब से सन् १९०२ से १९१२ तक के दस वर्षों की उन्नति विदित हो जावेगी।

		१९०२		१९१२	
		संस्थाओं की संख्या	विद्यार्थियों की संख्या (हजारों में)	संस्थाओं की संख्या	विद्यार्थियों की संख्या (हजारों में)
सार्वजनिक	प्राइमरी स्कूल	९६६३९	३२७२	१२३६९३	४९९२
	सेकंडरी (मध्य शिक्षा देने वाले) स्कूल	५५१०	५६१	६३९८	९२९
	स्पेशल या विशेष	१०७८	३५	६२०५	१८०
	कालिज	१९२	२३	१८७	३६
	प्राइवेट	४३१६०	६३८	४०१२०	६५७
	जोड़	१४८५४९	४५२९	१७६६०४	६७९४

शिक्षा-विभाग के नियम अनुसार पढ़ाई करानेवाली तथा उसके कर्मचारियों का निरीक्षण करवानेवाली सरकारी, म्युनिसिपल और जिला-बोर्डों की संस्थाएं सार्वजनिक कहलाती हैं;

और आर्यसमाज, ईसाइयों तथा अन्य विशेष सम्प्रदायों की संस्थाओं को प्राइवेट कहते हैं। स्पेशल स्कूलों में औद्योगिक, कला कौशल, इंजिनियरी, औषधादि के स्कूल शामिल हैं।

स्त्री-शिक्षा

आरम्भ में यहां स्त्री-शिक्षा के विषय में जनता का घोर विरोध रहा। यद्यपि अब भी वह विरोध नितान्त नष्ट नहीं हो गया है, यह सन्तोष की बात है कि धीरे धीरे स्त्री-शिक्षा का प्रचार बढ़ता जा रहा है। सन् १९०२ ई० में शिक्षा पानेवाली कन्याओं की संख्या साढ़े चार लाख से कुछ कम थी। सन् १९१२ ई० में उनकी संख्या साढ़े नौ लाख हो गयी। इनमें से अधिकांश प्राइमरी स्कूलों में ही शिक्षा पाती हैं। बाल-विवाह आदि की सामाजिक रीतिएं उनकी उच्च-शिक्षा प्राप्ति में बाधा डालती हैं। युरोपियन व ऐंग्लो-इंडियन लोगों में शिक्षा पानेवाले बालक और बालिकाओं की संख्या प्रायः बराबर ही है। भारतीय ईसाई और पारसी बालिकाओं की संख्या बालकों से आधी; ब्राह्मणों और बौद्ध धर्मावलम्बियों में एक पांचवां या छठा हिस्सा ही है। गावों में और कहीं कहीं नगरों में भी कन्या बालकों के साथ ही शिक्षा पाती हैं। शिक्षा देने की विधि सिखाने के लिए अध्यापिकाओं के नार्मल स्कूल होते हैं और कन्या-स्कूलों के निरीक्षण के लिए इन्सपेक्ट्रेस रहती हैं।

पृथकता

"युरोपियनों और युरेशियनों के बालकों की शिक्षा के लिए अलग प्रबन्ध है। उनके लिए ४०० स्कूल और कालिज वर्तमान समय में हैं जिनमें तीस हजार बालक शिक्षा पाते हैं। इस शिक्षा का व्यय ४२॥ लाख सालाना है।

"राजाओं के लड़कों और देशी रियासतों के राजकुमारों की शिक्षा के लिए विशेष स्कूल और कालिज हैं। ऐसे मुख्य कालिज अजमेर, राजकोट और लाहौर में हैं जहां पर इंगलिस्तान के स्कूलों के अनुसार राजकुमारों को शिक्षा दी जाती है जिससे उन्हें राज-कार्य करने में सहायता मिले।

"कलासम्बन्धी शिक्षा देने के लिए रुड़की, शिवपुर, मद्रास, पूना, बम्बई, जबलपुर में स्कूल और कालिज हैं जिनमें विद्यार्थी इंजिनियरी, विद्युत, ओवरसियरी, सरवेयरी आदि की शिक्षा पाते हैं। चित्रकारी इत्यादि कला कौशल सिखलाने के लिए स्कूल मद्रास, बम्बई, कलकत्ता और लाहौर में हैं।

कुछ पेशों की शिक्षा

"व्यवसाय-सम्बन्धी शिक्षा देने के लिए और शिल्पकार बढ़ई और लोहार आदि का काम सिखलाने के लिए १३२ स्कूल हैं जिनमें ८४०५ विद्यार्थी शिल्पकारी सीखते हैं। इस शिक्षा से देश की शिल्पकारी की अवस्था अच्छी हो जावेगी। शिक्षित शिल्पकारियों की मांग देश में बढ़ती ही जाती है।

"वाणिज्य-सम्बन्धी शिक्षा का प्रबन्ध भी स्कूलों में कर दिया गया है। कुछ वर्ष पहिले इस शिक्षा का कोई कोर्स (पाठ्य-क्रम) निश्चित नहीं था। परन्तु जब से स्कूल-लीविंग सरटिफिकेट की परीक्षा स्कूलों में हो गयी है तब से वाणिज्य-विषय जाननेवाले अध्यापकों की आवश्यकता हो गयी है। अतः सरकार के निदेश से लखनऊ में कमर्शल (Commercial) नार्मल स्कूल ऐसे अध्यापकों की पूर्ति के लिए खोला गया है। बम्बई, कालीकट, अमृतसर तथा और कई स्थानों में वाणिज्यसम्बन्धी शिक्षा दी जाती है।

"भारतवर्ष में जहां जन-संख्या का अधिक भाग खेती

के ऊपर जीवन व्यतीत करता है, कृषीसम्बन्धी शिक्षा की अत्यन्त आवश्यकता है। बम्बई प्रान्त में पूना नगर में, मद्रास प्रान्त में सैदापट नगर में कृषी-कालिज हैं, जिनमें तीन वर्ष तक कृषीसम्बन्धी बातें बतलायी जाती हैं। संयुक्त प्रान्त में कानपुर में और मध्य प्रदेश में नागपुर में भी कृषी-कालिज हैं। बंगाल प्रान्त में शिवपुर में भी ऐसी ही शिक्षा दी जाती है। इन कालिजों में शिक्षा का कार्य अंग्रेज़ी भाषा द्वारा ही होता है।

"मध्यम श्रेणी की शिक्षा को संतोषजनक बनाने के लिए शिक्षण-विधि सीखे हुए अध्यापकों की आवश्यकता है। अध्यापकों के शिक्षण के लिए वर्तमान समय में मद्रास, कुर्सीगांव, इलाहाबाद, लाहौर, जबलपुर में कालिज हैं जहां पर इन्ट्रेंस, एफ० ए० और बी० ए० पास लोग अध्यापक का कार्य सीखने जाते हैं।

धर्मसम्बन्धी शिक्षा

"सरकार की निर्द्धारित नीति यह है कि वह किसी मनुष्य के मत मतान्तर के विषय में हस्तक्षेप न करेगी और सबके धर्मों को समान दृष्टि से देखेगी। अतः सरकार धर्मसम्बन्धी शिक्षा का प्रबन्ध करने को असमर्थ है। जो स्कूल और कालिज अन्य धार्मिक सम्प्रदायों के अधीन हैं वहां पर तो उन धार्मिक सम्प्रदायों के मन्तव्यों की शिक्षा दी जाती है जिससे शिक्षा का उद्देश्य पूर्ण हो जाता है। ऐसे स्कूल और कालिज बहुत हैं। उनमें से मुख्य निम्नलिखित हैं—

"बनारस में सेन्ट्रल हिन्दू कालिज, लाहौर में दयानन्द ऐंग्लो-वैदिक कालिज, अलीगढ में मुहमेडन कालिज आदि।

"सरकारी स्कूलों और कालिजों में केवल लौकिक

शिक्षा दी जाती है। सदाचार-सम्बन्धी शिक्षा के लिए आन्दोलन हो रहा है। इसके लिए विद्यार्थियों के निवास करने के लिए अच्छे अच्छे छात्रालय स्थापित किये जा रहे हैं। अच्छे और सदाचारी अध्यापकों की आवश्यकता होती जा रही है जिससे विद्यार्थियों के आचरण पर अच्छा प्रभाव पड़े।"*

शिक्षा प्रचार की गति

स्वर्गीय महात्मा गोखले का हिसाब

अब तनिक देखना चाहिए कि भारत में कुल शिक्षित समुदाय कितना है। सन् १६११ ई० में हमारे यहां १०० आदमी और १०० स्त्रियों में से क्रमशः १० और १ ऐसे थे जिन्हें किसी प्रकार की शिक्षा प्राप्त थी। अंग्रेज़ी पढ़े हुओं की संख्या तो और भी कम रहनेवाली ठहरी। इसका हिसाब इस प्रकार है कि साधारणतया १० पढ़े हुए आदमी औरतों में केवल १ अंग्रेज़ी जाननेवाला मिलेगा।

वर्तमान शिक्षा-संस्थाएं हमारी आवश्यकताएं कहां तक पूरा कर रही हैं? साधारणतया यह देखने में आया है कि जितनी जनसंख्या किसी देश में होती है उसमें १५ फ़ी सदी ऐसी अवस्था के होते हैं जो स्कूल में शिक्षा पाने योग्य हों; परन्तु यदि यह भी समझा जाय कि भारतवर्ष में सैकड़े पीछे केवल १० ही पढ़ने की आयु के हैं तो भी क्या उन सब के लिए वर्तमान संस्थाएं पर्याप्त हैं? नहीं, यदि ऐसा होता तो शीघ्र ही देश के शिक्षित-समाज-पूर्ण होने की आशा होती। सुनिए, जिनकी उम्र हमने पढ़ने योग्य मानी है उनमें से सन् १६०१ ई० में केवल २७ फ़ी सदी के लगभग बालक

---

* नागरीप्रचारणी पत्रिका, भाग १७, सख्या ५, के आधार पर संक्षिप्त किया।

और ४॥ फ़ी सदी कन्याएं शिक्षा प्राप्त करती थीं। सन् १९११ ई० में उनकी औसत क्रमशः ३१ और ६ फ़ी सदी हुई।

स्वर्गवासी महात्मा गोखले ने वाइसराय की कौंसिल में अपना अनिवार्य और निश्शुल्क शिक्षा का विल पेश करते हुए कहा था कि यदि शिक्षा वृद्धि की यही गति रही और समझ लो कि जनसंख्या कुछ भी न बढ़े (जो सर्वथा असम्भव बात है) तो भी कहीं ११५ वर्ष में जाकर वह अवस्था आवेगी कि सब पढ़ने योग्य उम्र के बालकों को स्कूलों में स्थान मिल सके और वेचारी कन्याओं के लिए तो अभी ६६५ वर्ष की देरी है, जबकि उन सबको शिक्षा मिल सकेगी।

बस, यद्यपि शिक्षा में वृद्धि हो रही है, परन्तु उसकी गति की तीव्रता अभी यथेष्ट नहीं हो पायी है। गवर्मेंट ने गत वर्ष शिक्षा प्रचार के लिए विशेष रक़म प्रदान की थी, और हमें आशा है कि ब्रिटिश सरकार निरन्तर इस ओर ध्यान बनाये रक्खेगी।

शिक्षा का व्यय

व्यय		१९०१–२	१९११–१२
प्रान्तिक	सार्वजनिक	१०२ लाख रु०	२७० लाख रु०
लोकल फंडों अर्थात् स्थानीय कोषों से		५९ ”	१०५ ”
म्युनिसिपल फंडों से		१५ ”	३० ”
फीस		१२७ ”	२२० ”
अन्य खातों से		९७ ”	१६२ ”
		४०० लाख रु०	७८७ लाख रु०

इस प्रकार गत आलोचनीय दस वर्षों में शिक्षा-व्यय द्विगुण के लगभग हो गया है। परन्तु भारतवर्ष में अंग्रेज़ी राज्य की प्रजा की संख्या को विचारते हुए यह व्यय बहुत कम है। फ़ी आदमी वार्षिक आठ आने भी तो हिस्से में नहीं आते।

उन्नति के उपाय

देश में यथेष्ट शिक्षा प्रचार उसी समय होगा जब यहां अनिवार्य और निश्शुल्क शिक्षा-प्रणाली व्यवहृत की जावेगी। परन्तु उसके लिए अभी तक सरकार की समझ से समय ही नहीं आया है। अस्तुः, जब तक उसका समय आवे सरकार को शिक्षा प्रचार में उन्नति के लिए क्या क्या उपाय काम में लाने चाहिए इस विषय में हम दो एक बातों का उल्लेख करते हैं। प्रथम बात तो यही है कि यहां इस काम में जो व्यय हो रहा है इसकी मात्रा बढ़ायी जावे; इस अधिक व्यय के लिए फ़ीस न बढ़ायी जावे (वह तो पहिले ही से अत्यधिक है), वरन् अन्य रेल, शासन व सेना आदि के व्यय में कमी की जावे। द्वितीय बात यह कि सरकारी स्कूलों के भवन निर्माण, सामान तथा अन्य टीपटाप (Efficiency) की ओर कम ध्यान देकर सादगी से काम लिया जाय। पुनः जब तक देश में शिक्षा का यथेष्ट प्रचार न हो, ऐसे नियमों में व्यर्थ की कठिनाइएं उपस्थित न की जावें, जैसे एक श्रेणी में ३२ से और एक स्कूल में ४०० या ५०० की निर्द्धारित संख्या से अधिक छात्र शिक्षा न पा सकें; स्कूल का मकान अपना हो, इत्यादि। क्योंकि इनसे रुपया तो अधिक व्यय होता है और काम होता है कम।

वर्तमान शिक्षापद्धति का इतिहास बहुत मनोरञ्जक है,

परन्तु यहां उसके लिखने को स्थान नहीं। इतना बतला देना आवश्यक है कि आजकल जो उच्च शिक्षा का माध्यम अंग्रेज़ी बन रहा है यह बहुत वाद विवाद के पश्चात् पहिले कानूनी सलाहकार मेकाले के प्रभाव से सन् १८३५ ई० में निश्चित् हुआ था और बंगाल के तत्कालीन प्रसिद्ध नेता राममोहनराय ने भी इस कार्य में योग दिया था। उस समय वाद विवाद केवल इतना था कि शिक्षा अंग्रेज़ी में दी जाय या संस्कृत-फ़ारसी में, और इसमें अंग्रेज़ी पक्ष वाले की जीत रही।

शिक्षा का माध्यम

यह निश्चय है कि यदि कहीं अंग्रेज़ी का देशी भाषाओं से मुक़ाबला होता तो प्रथम पक्ष की जीत कठिन थी। आज विचारशील नेताओं का यह मत है और प्रसिद्ध इतिहास-लेखक मिस्टर सिले (Seeley) आदि अंग्रेज़ भी इसमें सहमत हैं कि यदि भारतवर्ष में यथेष्ट-रूप से शिक्षा का पुनरुद्धार होना सम्भव है तो वह न अंग्रेज़ी से होगा और न संस्कृत-फ़ारसी से, वरन् एक मात्र देशी भाषाओं द्वारा शिक्षा दिये जाने से ही होगा। अंग्रेज़ी एक स्वतंत्र भाषा के रूप में भली भांति पढ़ायी जा सकती है, परन्तु शिक्षा का माध्यम होने से यह कार्य में बाधक हो रही है।

यद्यपि सन् १८३५ ई० में यह निश्चय हो गया था कि उच्च शिक्षा का माध्यम अंग्रेज़ी रहे, तथापि यह स्पष्ट था कि उच्च शिक्षा प्राप्त करनेवाले थोड़े ही रहेंगे और सर्वसाधारण तक पहुंचनेवाली प्रारम्भिक शिक्षा केवल देशी भाषाओं द्वारा ही दी जा सकती है। बस, लार्ड डलहौज़ी ने सन् १८५४ ई० मे प्रारम्भिक शिक्षा का माध्यम देशी भाषा नियत किया।

इस स्थान पर हम ब्रिटिश सरकार के कृतज्ञ हैं कि उसके ही समय से देशी भाषाओं की विशेष उन्नति हुई है। इससे पूर्व उनमें गद्य का बहुत अभाव था। जब सरकार ने जनता की शिक्षा के लिए पुस्तकें लिखाने का विचार किया तब से गद्य बराबर बढ़ती रही है। आशा है कि यदि देशी भाषाएं उच्च शिक्षा का माध्यम बन जावें, अथवा पहिले कम से कम यह भाषाएं उच्च परीक्षाओं के विषयों में ही रक्खी जावें तो न केवल इन भाषाओं की यथेष्ट उन्नति हो, वरन् देशमें शिक्षा प्रचार कार्य में भी विशेष सुभीता हो जाय।

हर्ष की बात है कि हमारे कुछ कुछ विश्वविद्यालयों का ध्यान देशी भाषाओं की ओर आकर्षित हुआ है। बम्बई विश्व-विद्यालय ने मराठी भाषा को एम० ए० की परीक्षा के विषयों में रख दिया है। कलकत्ता विश्वविद्यालय ने तो बी० ए० की परीक्षा में हिन्दी का भी एक पेपर रखा है। खेद है कि इलाहाबाद विश्वविद्यालय ने अपनी प्रान्तिक एवं राष्ट्रीय भाषा हिन्दी को अब तक भी उच्च परीक्षाओं में स्थान नहीं दिया। आशा है कि हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, नागरी-प्रचा-रणी सभाएं तथा अन्य देशप्रेमी उक्त विश्वविद्यालय का भी ध्यान शीघ्र इस ओर आकर्षित करेंगे। इसी प्रकार हिन्दू विश्वविद्यालय भी अपने नाम को तभी सार्थक कर सकेगा जबकि वह हिन्दी प्रचार के लिए प्राणप्रण से चेष्टा करेगा, अन्यथा हिन्दी-प्रेम बिना उसका हिन्दू नाम बहुतेरों को हास्यप्रद प्रतीत होगा।

त्रयोदश परिच्छेद

स्वास्थ्य-रक्षा

भारतवर्ष में पहिले भी औषधालयादि की वर्तमान शैलिएं प्रचलित थीं या नहीं, यह हम निश्चयात्मक रूप से नहीं कह सकते, परन्तु इसमे कोई सन्देह नहीं कि प्राचीन काल मे यहां वैद्य और हकीम यथेष्ट थे और औषधशास्त्र में अच्छी उन्नति हो गयी थी। पीछे अन्य विद्याओं का प्रचार रुकने के साथ साथ ही, इसकी भी उन्नति क्रमशः स्थगित् हो गयी। वैद्यक और यूनानी ने नवीन वैज्ञानिक आविष्कारों से लाभ न उठाया। यही कारण है कि आज दिन यद्यपि उनके पुनरुद्धार की चेष्टा की जा रही है, तथापि पाश्चात्य अस्पताल (Hospital) पद्धति अधिकाधिक जनप्रिय होती जा रही है। इसकी भिन्न भिन्न प्रकार की संस्थाएं सन् १९११-१२ ई० मे इस हिसाब से थीं—

श्रेणिएं	संस्थाएं	संख्या
१	सरकारी सार्वजनिक	२५८
२	” विशेष	०
	” पुलिस	२७८
	” जंगलादि	७
	” नहर	३८
	” शेष	५७
३	लोकल फंड से	२२०७

४	प्राइवेट सरकारी सहायता प्राप्त	२५७
५	" बिना सहायतावाली	७०६
६	रेलवे	३०७
	योगफल	४१२८

साधारण परिचय

सन् १९११ ई० में इन संस्थाओं में ६ लाख से अधिक ऐसे रोगी रहे जिन्होंने दवा के अतिरिक्त वहीं से खान पानादि का सामान भी लिया; और साढ़े तीन कोटि के लगभग आदमी वहां से दवाई बाहर लाये। प्रथम, तृतीय व चतुर्थ श्रेणी की संस्थाओं में साल भर का एक करोड़ तीन लाख रुपए व्यय हुआ जिसमें से एक तिहाई से अधिक रुपया सरकार की ओर से वेतनादि में खर्च हुआ। लगभग इतना ही म्युनिसिपलटियों के फंड से उठा। शेष चन्दे आदि से हुआ।

स्त्रियों के लिए

सन् १९११ ई० में प्रथम, तृतीय व चतुर्थ श्रेणी की केवल स्त्रियों के इलाज के लिए १२८ संस्थाएं थीं। ऐसी संस्थाओं का प्रबन्ध पहिले पहिल लेडी डफ्रिन ने सन् १८८५ ई० में किया। उसकी आरम्भ की हुई संस्थाओं में स्त्रियों को इलाज करना, तथा दाई व धाय आदि का काम सिखाया जाता है। अब उनके लिए एक स्वतंत्र विभाग रचने की स्कीम बनायी जा रही है। कहना नहीं होगा कि देशी स्त्रियों से ही यहां अधिक लाभ होगा।

पागलखाने सब सरकारी प्रबन्ध में हैं। जिन पागलों से दूसरे मनुष्यों को कुछ हानि की सम्भावना नहीं, उनकी

तो प्रायः उनके मित्रादि ही देखभाल व भरण पोषण कर देते हैं। जिन से हानि की आशंका है अथवा जिनका कोई संरक्षक नहीं, वे ही पागलखानों में भेजे जाते हैं: ऐसो की संख्या सन् १६११ ई० में ६०५२ थी।

पागल व कोढियों के लिए

भिन्न भिन्न स्थानो मे कोढ़ियो के वास्ते कुछ शान्ति-कुटीर (Assylum) वनाये हुए हैं। गत मनुष्य-गणना में भारतवर्ष के कोढ़ियों की संख्या एक लाख से कुछ ऊपर थी।

मेडिकल (औषध सम्बन्धी) कर्मचारी तीन श्रेणियों के होते हैं। (क) इंडियन मेडिकल सर्विस-ये मुख्यतः फ़ौजी नौकरी के होते हैं यद्यपि सिविल स्थानों में ही अधिकतर काम करते है। (ख) सिविल असिस्टेंट सर्जन-ये कालिजो मे शिक्षा पाये हुए एवं विश्व-विद्यालयो की डिग्री (Degree) व डिप्लोमा (Diploma) प्राप्त होते हैं और छोटे अस्पतालों अथवा शफ़ाखानों (Dispensary) मे काम करते है। (ग) सिविल अस्पताल असिस्टेंट—ये छोटे छोटे शफ़ाखानों मे रहते है। इन्हें मेडिकल स्कूलो में शिक्षा मिली होती है जो भिन्न भिन्न स्थानो में खुले हुए है।

मेडिकल आफिसर

भारतवर्ष में चार कालिज हैं जो विश्वविद्यालय की डिग्री देते हैं। इनमे सन् १६११-१२ ई० मे १५५३ सिविल व प्राइवेट विद्यार्थियों, ६३ स्त्रियों, और २०४ फ़ौजी छात्रों को शिक्षा मिली। डिप्लोमा के लिए शिक्षा देनेवाले स्कूलों की संख्या १४ है। इनमे १६११-१२ ई० मे १८६५ सिविल और प्राइवेट विद्यार्थियो, १३५ स्त्रियो और २८७ फ़ौजी छात्रो को शिक्षा मिली।

मेडिकल शिक्षा

मेडिकल विभाग का प्रधान डाइरेक्टर जनरल अथवा सर्जन जनरल (Sargeon General) होता है। सन् १९०४ ई० से भारत सरकार का एक सैनिटरी (स्वास्थ्य-सम्बन्धी) कमिश्नर रहने लगा है। पहिले इसका काम मेडिकल विभाग का ही प्रधान किया करता था।

औषध व स्वास्थ्य प्रबन्ध

प्रत्येक प्रान्त की औषध व स्वास्थ्य-सम्बन्धी देख रेख का प्रबन्ध वहां की स्थानीय सरकार के ही हाथ में रहता है। इनके दो सलाहकार मुख्य होते हैं; सिविल अस्पतालों का इन्सपेक्टर जनरल (अथवा बम्बई और मद्रास में सर्जन जनरल), और सैनिटरी कमिश्नर। छोटे प्रान्तों में एक ही सलाहकार रहता है।

ज़िले का औषध व स्वास्थ्य-प्रबन्ध सिविल सर्जन करता है। हर एक ज़िले के मुख्य स्थान में एक अस्पताल एवं छोटे छोटे कस्बों में शफ़ाखाने हैं।

सन् १९०७ ई० में भारत सरकार ने स्वास्थ्य-सुधार के जो प्रस्ताव किये उनमें एक यह भी था कि जिन कस्बों में एक लाख से अधिक जनसंख्या हो वहां एक सफाई का डाक्टर (Health Officer), एवं जहां जनसंख्या २० हजार और एक लाख के बीच हो वहां एक मेडिकल कर्मचारी रहे। स्थानीय सरकारों के पसन्द करने पर यह स्कीम और परिवर्द्धित की गयी और भारत सरकार ने स्थानीय सरकारों को आवश्यक होने पर सहायता देना भी स्वीकार कर लिया।

बड़े बड़े शहरों में स्वास्थ्य-सम्बन्धी विविध प्रकार के आन्दोलन चल रहे हैं। अहातों के शहरों में पनाले (मोरियां)

व नल-कल लगाने में वहुत उन्नति हो रही रही है। शहर की घनी आवादी को छोड़ धनी लोग आस पास की खुली वस्ती का निवास पसन्द करते जा रहे हैं। स्वास्थ्यागार, खुले वाज़ार और चौड़ी सड़कें वनायी जा रही है और कई एक शहरों में सुधार-समितिएं (Improvement Trusts) काम कर रही हैं। अखिल भारतवर्षीय स्वास्थ्य सभा (All India Sanitary Conference) भी गत चार वर्ष से नियमानुसार अधिवेशन कर जनता का ध्यान इस ओर आकर्षित कर रही है।

शहरों में स्वास्थ्य

शहरों में यह सब एवं और भी वहुत कुछ हो सकता है। उद्योग धंधों में लगे हुए आदमियों की अच्छी आमदनी है, और म्युनिसिपलटियों के पास भी पैसा है और वे वड़े वड़े कार्य आरम्भ कर सकती हैं। अब तनिक देहातों का भी हाल सुनिए।

भारतवर्ष में शहरों में रहनेवाले आखिर थोड़े ही है। अधिकांश क्या, कोई ९० फ़ी सदी आदमी देहातो में ही जीयन व्यतीत करते हैं। अन्नदाता किसान लोग, जिन पर देशोन्नति का मूलाधार अवलम्वित है और जो राजा और प्रजा दोनों की समृद्धि व कल्याण के हेतु है, वे गांवों में ही रहते है। इस लिए इनमें विशेष जागृति की आवश्यकता है। परन्तु देहातों के स्वास्थ्य का प्रश्न जितने महत्व का है उतना ही दुस्साध्य भी है और यह कहा जा सकता है कि इसकी मिमांसा का अभी तक यथेष्ट श्रीगणेश भी नही हुआ है। गंदे पानी के वहाव के लिए अधिकतर प्रकृति ही रास्ता वना देती है; पनाले व नालियां वे लोग प्रायः जानते ही नही। हजारों वर्षों के पुराने ऊंचे

देहातों का प्रश्न

नीचे मार्ग वहां अभी भी हैं। वर्तमान नई रोशनीवाले खुले चौड़े बाज़ार व सड़कें ढूंढ़े से ही मिलेंगी। रोगों का प्रचार यहां विशेष हुआ है। इसका मुख्य कारण (शिक्षा के अभाव के अतिरिक्त) यह है कि इन्हें स्थानीय स्वाराज्य में बहुत थोड़ा हिस्सा मिला है; लोकल बोर्डों का प्रभाव प्रत्येक गांव में यथेष्ट रूप से नहीं पहुंचता; फिर उनकी आय ही ऐसी परिमित है जो उन्हें अनेक सुधार करने से रोके रखती है। इस सम्बन्ध में हम पुनः एक बार प्राचीन ग्रामीन-सहयोग अथवा पंचायत-पद्धति को याद किये विना नहीं रह सकते। हमारा दृढ़ विश्वास है कि उसके पुनरुद्धार विना यथेष्ट कल्याण कठिन ही है।

कुछ बीमारियां

सरकारी भारत में नवजात बालकों की वार्षिक संख्या फ़ी हजार ३८·६ है और मृत्यु संख्या ३२ है। अज्ञानी आदमियों द्वारा लिखाये हुए मृत्यु के कारणों में त्रुटियां होनी सहज है, तथापि यह निर्विवाद है कि यहां बालकों की मृत्यु-संख्या अन्य देशों की अपेक्षा कहीं अधिक है एवं कुछ बीमारियों ने यहां बेतरह अड्डा जमा लिया है। ऐसी बीमारियों का मनुष्य-गणना के आधार पर कुछ उल्लेख कर देना अनुचित न होगा।

बुखार—इसके शिकार बहुत आदमी बनते हैं; इनकी संख्या फ़ी हजार १९ तक होना साधारण बात है। और बुखारों में मुख्य हैज़े का बुखार है जिसके प्रतिवर्ष दस लाख मनुष्य भेंट हो जाते हैं।

चेचक—इसे शीतला माता (?) की बिमारी भी कहा करते हैं। इससे प्रायः बच्चों का ही संहार विशेष होता है। और बीमारियों की अपेक्षा चेचक से मृत्यु-संख्या अब कम

होती हैं; अनेक स्थानों में इसका टीका अनिवार्य्य कर दिया गया है।

प्लेग—इस भयंकर बीमारी का दुरागमन यहां सन् १८९५ ई० में हुआ। आरम्भ में प्रति वर्ष इससे दो तीन हजार आदमियों की मृत्यु होती थी। इसके निवारणार्थ कई एक उपाय सोचे गये, परन्तु "मरज़ बढ़ता गया ज्यों ज्यों दवा की"। क्रमशः बढ़ते बढ़ते अब इसकी मृत्यु-संख्या की लाखों पर नौबत आ गयी। अभी तक यही मालूम हो सका है कि यह बीमारी चूहों से पैदा होती है और फिर आस पास के लोगों में फैल जाती है। सरकार प्लेग के टीके का प्रचार कर रही है—पर कुछ लोगों का इसमें विश्वास नहीं है।

निवारण के पहिले कारण जान लेना आवश्यक है।

बीमारियों का निवारण

सम्भवतः इसमें संदेह नहीं है कि बीमारियों का एक प्रगट कारण अधिकांश जन-समाज का अज्ञान है। यदि गली कूचों व मकानों में खूब सफ़ाई रहे; स्वच्छ जल काम मे लाया जाय, और खान पान की चीज़ों मे मिलावट न हो तो बहुत सी बीमारियां रुक सकती है। परन्तु जो लोग इन साधारण बातो को भली भांति जानते है, वे भी तो विना पैसे इनका यथेष्ट प्रवन्ध नही कर सकते। हमें भूलना न चाहिए कि रोग और दरिद्रता मे घनिष्ट सम्बन्ध है। यदि लोगो के पास धन की आवश्यक मात्रा हो तो स्वास्थ्य-सम्बन्धी अनेक सुधार स्वतः हो जावें। क्या हम नही जानते कि योरोप में भी नातिदूर भूत मे एक समय था जब वहां के निवासियों के शरीर भी भारतियो के समान रोगों के घर बने हुए थे; अन्य बीमारियों के साथ साथ प्लेग का ही प्रकोप कुछ कम न था। आज वहां

की अवस्था सुधर गयी। हम भी ध्यान दें तो क्या यहां की अवस्था नहीं सुधर सकती? हां, भारतीय कला कौशल की उन्नति तथा स्वदेश-वस्तु-प्रचार द्वारा देश का धन बढ़ाने से काम चलेगा, बातों से नहीं।

चतुर्दश परिच्छेद

सार्वजनिक कार्य (Public Works.)

आरम्भिक स्थिति

१९वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक सार्वजनिक कार्य केवल फ़ौजी मकानात, सिपाहियों के बारक, सड़कें तथा अन्य सिविल मकानात बनाने तक ही परिमित थे। कुछ पुराने तालाबों, नहरों व घाटों की व्यवस्था भी अवश्य करायी जाती थी; परन्तु अधिकांश खर्चा फ़ौजी कामों में ही उठता था; यहां तक कि सार्वजनिक-कार्य-विभाग फ़ौजी विभाग का ही एक अंग समझा जाता था, एवं प्रत्येक प्रेसिडेंसी में उसके फ़ौजी विभाग के ही सुपुर्द यह काम भी रहता था।

सन् १८५५ ई० से सार्वजनिक कार्य्यों में निम्नलिखित विभाग सम्मिलित हो गये—(१) रेल, (२) सिंचाई, (३) सड़क व मकानात। और पीछे इनका विभाग फ़ौजी विभाग से पृथक् कर दिया गया।

रेलों का आरम्भ

यद्यपि रेल बनाने का विचार पहिले पहिल सन् १८४३ ई० में हुआ, परन्तु छः साल तक कुछ कारवाई न हुई और सन् १८४९ ई० में लार्ड डलहौज़ी ने ही यह कार्य प्रारम्भ किया।

हिन्दुस्तान के समस्त प्रधान नगरों को रेलों द्वारा मिला देने की तजवीज़ उसीकी है। बम्बई व कलकत्ते से चलनेवाली जी. आई. पी (G. I. P.) और ईस्ट इंडिया रेलवे सबसे पुरानी लाइनें हैं। ये सन् १८४६-५० ई० मे आरम्भ हुई।

भिन्न भिन्न अवस्थाएं

जी. आई. पी., बी. बी. सी. आई. और मद्रास रेलवे के बनवाने में सरकार गारंटी (Guarrantee) प्रणाली काम में लायी। सरकार ने इस बात का ठेका लिया कि कम्पनिएं उसकी सम्मति से जो रुपया रेलों के काम में खर्च करेंगी, उस पर उन्हें पांच फ़ी सदी सूद (मुनाफ़ा) रहेगा, अर्थात् यदि इससे कम रहा तो सरकार उसकी भरपायी कर देगी और जो ज्यादा रहा उसमें से आधा सरकार लेगी और आधा कम्पनिएं। हिसाब हर छःमाही मे होता था। ये लाइनें सरकार की निगरानी मे बनवानी होती थीं और सरकार को कुछ निर्द्धारित समय बाद उन लाइनों को ख़रीदने का अधिकार होता था। सरकार अब कितनी ही लाइनों की मालिक हो गयी है। उक्त प्रणाली अन्ततः बहुत खर्चीली सिद्ध हुई। कम्पनिएं विशेष उत्साह से काम न करती थीं, मनमाना खर्च उठाती थीं; कारण कि फ़जूल खर्ची करने पर भी उनके निश्चित् मुनाफ़े के कम होने की तो कोई आशंका थी ही नही। बस, सन् १८६९ ई० से यह प्रणाली त्याग दी गयी और यह निश्चय हुआ कि सरकार स्वतः अपनी रेलें बनावे।

सन् १८६९ ई० से पहिले की रेलो की पटड़ियों की चौड़ाई 'चौड़े' या स्टैंडर्ड (Standard) नमूने की अर्थात्

पाँच फुट छः इंच होती थी। पश्चात् सरकार द्वारा वनायी हुई रेलों की लाइन मीटर (३ फुट ३$\frac{3}{8}$ इंच) के माप की रखी गयीं।

दस वर्ष पीछे सन् १८७९ ई० में पुनः पुरानी नीति अवलम्वन की गयी और उस समय से जो लाइनें बनी है वे कुछ अंश में सरकार की ओर से और कुछ कम्पनियों की ओर से वनायी हुई हैं। कम्पनियों के सूद की गारंटी सरकार लेती है और ज़मीन उन्हें मुफ़्, विना कुछ दाम दिये मिल जाती है। सरकार कम्पनियों पर निगरानी रखती है; ठेके में यह वात लिखी रहती है कि कम्पनी अमुक प्रमाण से अधिक किराया व महसूल न ले सकेगी।

नीचे के नकशे से हिन्दुस्तानी रेलों के विषय में कुछ अच्छी जानकारी होगी।

		विस्तार मीलों मे	
		१९०१	१९११
१	सरकार की वनायी और सरकार के अधिकार में	५१२५	६८७८
२	कम्पनी की वनायी " "	१३३८७	१७९४९
३	" " डिस्ट्रिक्ट वोर्ड लाइन	५	१५५
४	" सरकार से किराये दी हुई	०	७९
५	" की लाइन पुरानी गारंटी से	१३३४	०
६	" " नवीन "	३२	३२

७ कम्पनी की बनायी ब्राञ्च लाइन जिन्हें रिबेट (Rebate) प्रणाली से सहायता मिली		११७१
८ " ब्राञ्च लाइन सरकार से सहायता प्राप्त	२२७६	५५४
९ " " डिस्ट्रिक्ट बोर्ड "		२६५
१० " " जिन्हें केवल ज़मीन मिली		१६४६
११ " बिना सहायता की लाइन	४२	६५
१२ देशी रियासतों की लाइनें स्वतः उनसे बनायी हुई	१२२९	१६६२
१३ " कम्पनी द्वारा बनायी हुईं	१५८४	२०५५
१४ " सरकार द्वारा "	२३५	२५७
१५ भारत में विदेशी राज्यों की लाइनें	७	७४
	२५३७३	३२८३९

बड़ी बड़ी रेलें कम्पनियों व सरकार द्वारा बनायी जाने पर ब्राञ्च वा फीडर (Feeder) लाइनों की आवश्यकता हुई। अन्ततः मद्रास व बंगाल के डिस्ट्रिक्ट बोर्डों को प्रलोभन दे क्रम से १५५ व २६५ मील रेलवे बनवायी गयीं।

आय-व्यय

सन् १९११ ई० तक चलती हुई रेलों में ४५० करोड़ रुपए से अधिक व्यय हुए। और कुल मिला कर ६१ करोड़ की आय हुई, जिसमें से यदि चलाने के खर्च के ३० कोटि रूपए निकाल दिये जावें तो शेष ३१ कोटि अर्थात् मूल पूंजी पर ६·८ फ़ी सदी

वास्तविक आय रही। जो रेलें सरकारी हैं अथवा जिनके लिए सरकार ने कम्पनियों को गारंटी दे दी है, उनका खर्च भारत सरकार की सालाना देनगी से चलता है जो अब एक करोड़ साढ़े सत्तास्सी लाख रुपया वार्षिक नियत कर दिया गया है।

आरम्भ में वहुत समय तक सरकार को रेलों से कुछ लाभ न हुआ। सन् १६०४-५ से १६०८-६ तक वार्षिक लाभ की औसत तीन करोड़ रुपए रही। सन् १६०६-१० ई० में वास्तविक हानि ही हुई। सन् १६०६-१० और सन् १६११-१२ ई० में क्रम से तीन और साढ़े पांच करोड़ रुपया लाभ हुआ।

यद्यपि सरकार की रेलवे-नीति के कुछ आलोचक महाशय यह चाहते हैं कि सरकार को रेलवे-विस्तार की गति अधिक तीव्र करनी चाहिए, परन्तु जब कि सरकार को शिक्षा, स्वास्थ्य व सिंचाई जैसे अधिकतर महत्व के सुधार व उन्नति के कार्यों को यथेष्ट रूप से करने से केवल आर्थिक वाधाओं के कारण रुकना पड़ता है, तो हम तो यही समझते हैं कि रेलवे में जो खर्च हो रहा है वही ज्यादा है।

रेलवे-विभाग का प्रवन्ध

सन् १६०५ ई० तक रेलवे का काम भारत सरकार के सार्वजनिक कार्य-विभाग के अधीन रहा। उस वर्ष यह रेलवे के विशेषज्ञों के एक वोर्ड के सुपुर्द हुआ, जिसमें एक सभापति और दो अन्य मेम्वर होते हैं। रेलवे प्रोग्राम, व्यय व नीति सम्वन्धी सव मामलों का फैसला उक्त वोर्ड द्वारा होता है; सभापति के अधिकार वहुत विस्तृत हैं। रेलवे वोर्ड व्यापार और उद्योग-विभाग से विलकुल स्वतंत्र है, यद्यपि अन्तिम निर्णयाधिकार भारत सरकार व स्टेट सेक्रेटरी के हाथ में रहता है।

सिंचाई (Irrigation)

सिंचाई के लिए कुएं और तालाव तो भारतवर्ष में अति प्राचीन समय से रहे हैं, परन्तु नहरों का उल्लेख विशेषतया मुसलमानों के समय से ही मिलता है। मद्रास, पंजाव और संयुक्त प्रान्त के नहरादि के अवशेष चिह्नों से ही भारत-सरकार का ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ और इसे अपने महान् कार्यों के प्रारम्भ करने की सूझी, ऐसा कहना हमारी समझ से अत्युक्ति नही है।

सिंचाई की प्रणालिएं

भारतवर्ष के विविध भागों की स्थानीय प्राकृतिक दशा भिन्न भिन्न होने से यहां सिंचाई की कई एक प्रणालिएं प्रचलित हैं।

१—कुएं। इनमें पृथ्वी ही कुदरती तौर पर पानी जमा रखने का काम कर देती है। ये वहुत लाभकारी हैं और अधिकतर लोगों के अपने ही बनाये हुए है, यद्यपि सरकार इस कार्य में प्रोत्साहन व सहायता देती है।

२—तालाव। भारतवर्ष में साधारण सिंचाई का तालाव नगर के वहते पानी को एक सुभीते के स्थान पर रोक कर, उसके चारों ओर मेंढ (किनारा) बना देने से बन जाता है। मद्रास का पूर्वी भाग सिंचाई की इस पद्धति के लिए बहुत ही उपयुक्त है और वहां बहुत तालाब बने हुए है जिनमें से कुछ का घेरा तो कई कई मील है। भारत-सरकार ने छोटे बड़े अनेक तालाव बनवाये हैं और कुछ थोड़े से लोगों के अपने भी है।

३—नहर। ये अधिकांश में सरकार द्वारा बनाई हुई हैं

और उसी के प्रवन्ध में है। भारतवर्ष कृषी-प्रधान देश है, उद्योग धन्धों से यहां वहुत थोड़े आदमियों की जीविका चलती है। यही कारण है कि जिस साल वर्षा नही होती, अथवा कम होती है, उस साल करोड़ों मनुष्यों के जीवन-संग्राम में कठिनाइएं बढ़ जाती हैं। अकालों के पुनः पुनः घटित होने से सरकार नहर के विषय में ध्यान देने को वाध्य हुई। गत थोड़े से वर्षों में इस काम में ख़ासी उन्नति हुई है। उदाहरणार्थ पंजाब में नहरों का विस्तार होने से वहां अन्न की पैदावार पहिले की अपेक्षा वहुत वढ़ गयी है।

खर्च के विचार से हिन्दुस्तान में सिंचाई के काम दो भागों में विभक्त हैं—(१) वड़े (Major), (२) छोटे (Minor)।

सिचाई के कामों के भाग

१—वड़े कामों के पुनः दो हिस्से हैं—(क) वृद्धिकारक (Productive)। इनके लिए पूंजी उधार ली जाती है और यह अनुमान किया गया है कि इनमें जो पूंजी व्यय होती है, उससे इतनी आय हो जाती है कि उनके चलाने का खर्च तथा पूंजी का सूद निकल सके।

(ख) रक्षाकारक (Protective)। इनके लिए आवश्यक पूंजी सरकारी चलते खाते से ले ली जाती है। इनका उद्देश्य यह है कि अकाल से रक्षा हो।

२—छोटे कामों के वनाने और उनकी व्यवस्था रखने में जो पूंजी आवश्यक होती है वह आय के साधारण श्रोतों से मिल जाती है। इनमें वहुतों का हिसाव किताव विलकुल अलग रक्खा जाता है।

नीचे सिंचाई का सन् १९११-१२ ई० का हिसाब दिया जाता है, जिससे इसके वर्तमान कामों की कुछ कल्पना हो जायगी।

	विस्तार (मीलों में)	सिंचाई का क्षेत्रफल (एकड़ों में)	व्यय (रुपयों में)	वास्तविक आय (फी सदी)
१—बड़े काम (क) वृद्धिकारक (ख) रक्षाकारक	४३ हज़ार	१५० लाख	५५.५ करोड़	७.५२
२—छोटे काम	४.३ ,,	१८ ,,	३.८ ,,	७.७८

कमीशन की रिपोर्ट

कर्ज़न महोदय ने सन् १९०३ ई० में सिंचाई का जो कमिशन बैठाया उसकी अधिकांश शिफारिशें मानते हुए भारत-सरकार ने अपना मन्तव्य प्रकाशित किया। तब से इस कार्य में विशेष उन्नति हुई है, इससे उसका कुछ उल्लेख कर देते हैं। कमीशन की शिफारिश थी कि सिंचाई के जो कार्य में परिणत हो सकनेवाले

कार्य अभी तक शेष हैं, वे २० वर्षों में ४४ कोटि रुपये व्यय करके पूर्ण कर दिये जावें जिससे ६५ लाख एकड़ भूमि की और अधिक सिंचाई होने लगे। यह हर्ष की बात है कि इनमें से बड़े बड़े कार्य आरम्भ हो गये है—यद्यपि हम यह कहे विना नहीं रह सकते कि गत पांच वर्षों में जो बेशुमार रुपया रेलवे आदि में व्यय किया गया है, उसका कुछ हिस्सा सिंचाई के कामों में लगा देना बहुत लाभकारी होता। कमीशन के मतानुसार "पंजाब, सिंध और मद्रास ऐसे स्थान है जहां कुछ विस्तार से काम हो सकते है। जिन स्थानों में ये कार्य हो गये हैं, उनमें अकाल की आशंका नही है। बम्बई व मद्रास के दक्षिणी जिलों में, एवं मध्य प्रान्त और बुंदेलखंड में सिंचाई के ऐसे नवीन कार्य नहीं हो सकते जिनसे प्रगट आय हो; परन्तु भविष्य में अकाल की विकरालता हटाने के लिए कुछ काम अवश्य हो जाने चाहिए।"

सिविल मकानात और सड़कें

रेलवे और सिंचाई के अतिरिक्त सार्वजनिक कार्य-विभाग की एक तीसरी शाखा है सिविल मकानात और सड़कें। इनमें ऐसे काम शामिल हैं—सड़कों का बढ़ाना व उन्हें बनाये रखना। सरकारी कामों के वास्ते आवश्यक मकानात—स्कूल, अस्पताल, जेल, दफ़तर, अजायबघर, अदालतें इत्यादि—बनाना व मरम्मत कराते रहना, तथा सार्वजनिक सुधार के कार्य करना जिनमें रोशनीघर (Light-houses), बन्दर, घाट, पुल, जल-प्रबन्ध, और स्वास्थ्यागारादि सम्मिलित है। इनका खर्चा विशेष कर प्रान्तिक आय से दिया जाता है और इनकी आमदनी मकानों के किराये तथा नहरों व घाटों के महसूलादि से होती है। सन् १६११-१२ में कुल आय ५० लाख रुपये के

लगभग हुई, जिसमें १० लाख से कुछ अधिक भारत-सरकार के हिस्से में आये। उस वर्ष का कुल व्यय ८ करोड़ रुपये के करीव हुआ जिसमें से सवा करोड़ भारत-सकार ने दिये। छोटे छोटे सार्वजनिक कार्य प्रायः लोकल बोर्डों के हाथ में है, जिन्हें असाधारण कठिनाई उपस्थित होने पर सार्वजनिक-कार्य-विभाग के कर्मचारी सहायता देते हैं।

दैशिक व प्रान्तिक सार्वजनिक-कार्य-विभाग का संगठन

अधिकार-विभाजक-कमीशन ने अपनी रिपोर्ट में उक्त संगठन के सम्बन्ध मे इस प्रकार लिखा है—

भारत-सरकार का सार्वजनिक कार्य-विभाग कौंसिल के उस मेम्वर के अधीन है जिसके सुपुर्द लगन व खेती का काम है; मद्रास और वम्बई मे यह विभाग साधारणतया वहां के गवर्नरो के अधीन है। अन्य स्थानो में यह वहां के प्रान्तिक-प्रधान कर्मचारी के अधीन रहता है।

प्रत्येक प्रान्त मे सार्वजनिक कार्यों के स्टाफ़ (Staff) के प्रधान कर्मचारी चीफ़ इन्जिनियर (Chief Engineers) होते है जो इस सम्बन्ध मे स्थानीय सेक्रेटरियों का भी काम करते है। मद्रास, बम्बई, बंगाल, संयुक्त प्रान्त और वर्म्मा में दो दो चीफ़ इन्जिनियर रहते हैं—एक सिंचाई के लिए, दूसरा सड़कों व मकानों के लिए। पंजाब में सिंचाई का काम अधिक होने से वहां दो चीफ़ इन्जिनियर इसी काम के लिए रहते हैं और सड़क व मकानों के लिए एक अलग रहता है। आसाम व मध्य प्रान्त मे एक एक ही चीफ़ इन्जिनियर है। जिन प्रान्तो में सिंचाई तथा सड़कों व मकानो के लिए अलग अलग चीफ़

इन्जिनियर नियत हैं उनके ज़िलों के स्टाफ़ में भी इस कार्य-पृथकता का विचार रक्खा जाता है। अन्यत्र दोनों कामों के लिए वे ही कर्मचारी रहते है।

प्रत्येक प्रान्त सार्वजनिक कार्यों के लिए कुछ डिवीज़नों में विभक्त है। प्रत्येक डिवीज़न में कहीं एक, कहीं कई सिविल डिस्ट्रिक्ट रहते हैं और कहीं कहीं एक का भी केवल कुछ भाग ही रहता है। एक डिवीज़न एक एग्ज़िक्टिव इन्जिनियर के सुपुर्द रहता है जो अपनी सुपुर्दगी के सब कामों को करने व सुधारने का उत्तरदाता है।

एग्ज़िक्टिव इन्जिनियर के नीचे सहायक-इन्जिनियर और एक स्टाफ़ रहता है जिसके मुख्य कर्मचारियों को सबार्डिनेट (अधीन) इन्जिनियर, सुपरवाइज़र (निरीक्षक) और ओवरसियर कहते हैं। इन सहायक पदाधिकारियों के सुपुर्द या तो डिवीज़न का कोई हिस्सा या उसके कुछ विशेष कार्य रहते हैं।

५, ६ डिवीज़नों का एक सर्कल (Circle) होता है जो एक सुपरिंटेंडिंग (Superintending) इन्जिनियर के सुपुर्द रहता है। जांच पड़ताल के लिए उसीके पास एग्ज़िक्टिव इन्जिनियर बड़े बड़े एस्टिमेट (खर्चे के अन्दाज का चिट्ठा) भेजता है।

चीफ़ सुपरिंटेंडिंग, एग्ज़िक्टिव व सहायक इन्जिनियर ही सार्वजनिक कार्य-विभाग के स्टाफ़ के मुख्य कर्मचारी होते हैं। इनमें अधिकांश इंगलैंड में भरती हुए और शिक्षा पाये हुए सिविल इन्जिनियर रहते हैं। परन्तु हिन्दुस्तान में भरती हुए कुछ शाही (Royal) इन्जिनियर और बहुत से 'प्रान्तिक' इन्जिनियर भी रहते हैं। पंजाब में (रेलवे के अतिरिक्त)

सिचाई के काम में कुछ स्थायी और पेन्शन के अनधिकारी इञ्जिनियर भी हैं।

प्रान्तिक इञ्जिनियर हिन्दुस्तान-निवासी [जिनमें भारतीय (Domiciled) युरोपियन या युरेशियन भी शामिल हैं] होते है। ये यहां के कालिजों से दो प्रकार से भरती होते हैं —(क) सरकार प्रत्येक वर्ष कुछ विशेष योग्यता-सम्पन्न विद्यार्थियो की नियुक्ति का स्वय जिम्मा लेती है। (ख) अपर सबार्डिनेट (Upper Subordinate) श्रेणी के विद्यार्थियों को तरक्की दे दी जाती है। प्रान्तिक नौकरी का वर्तमान संगठन १८९२ से हुआ। इस नौकरीवाले शाही नौकरी के कर्मचारियों सरीखे ही काम करते है एव वैसे ही पद पा सकते हैं, परन्तु अधिकांश स्थितियो में उन्हे वेतन कम मिलता है।*

सबार्डिनेट सार्वजनिक कार्यों की नौकरीवाले हिन्दुस्तान मे यहां के ही स्थानीय कालिजो से भरती होते हैं। इनमें कुछ ब्रिटिश सिपाही होते है जिन्होंने रुडकी मे इञ्जिनियरी की शिक्षा पाये हो और शेष सब हिन्दुस्तानी। इसके दो विभाग हैं—(१) अपर सबार्डिनेट जिनमे ओवरसियर सुपरवाइज़र तथा सबार्डिनेट इञ्जिनियर शामिल हैं। इनका वेतन ६० रुपए से ५०० रुपए मासिक तक रहता है। (२) लोअर सबार्डिनेट या सब-ओवर्सियर (Sub-overseer) जिनका वेतन ३० रुपए से ७० रुपए मासिक तक रहता है।

सार्वजनिक कार्यों के हिसाब की निगरानी का काम भारत-सरकार का सार्वजनिक कार्य-विभाग करता है। इसके बड़े स्टाफ़ मे परीक्षक व सहायक-परीक्षक रहते हैं, और

*भला यह क्यों ?—लेखक।

कंट्रोलर (Comptroller)-जनरल को भी हिसाब की निगरानी के कुछ अधिकार प्राप्त हैं।

पंचदश परिच्छेद

भारतवर्ष में नवयुग

संसार सदैव परिवर्तनशील है, अथवा यों कहिए कि परिवर्तन ही प्रकृति का नियम है। हम जहां हैं वहां नहीं ठहर सकते। आगे नहीं बढ़ेंगे तो पीछे पड़ना ही होगा; उन्नति नहीं करेंगे तो अवनति तो निश्चित है। परन्तु प्राकृतिक परिवर्तन सदैव धीरे धीरे हुआ करते हैं, अथाह समुद्र के स्थानों में उच्च हिमाचल हो जाते हैं; पर एक दम नहीं। कहीं कहीं हमें यह भी पता नहीं चलता कि पर्वत कहां से आरम्भ होता है। यही दशा देश के ऐतिहासिक परिवर्तनों की है। कौन सी सामाजिक, धार्मिक व राजनैतिक लहर कहां से प्रारम्भ हुई, यह निश्चय रूप से कहना कठिन है: पर जब वह कुछ दूर तक कार्य कर चुकती है तब जाकर साधारणतया उसका कुछ पता चलता है।

वर्तमान भारतवर्ष का जब हम अंग्रेज़ों के यहां आने के पूर्व की स्थिति से मिलान करते हैं तो कई एक ऐसे परिवर्तन प्रतीत होते हैं कि उनके समष्टिरूप प्रभाव से हमें आज यहां नवयुग उपस्थित हुआ जान पड़ता है। उनमें से कुछ परि-वर्तनों का वर्णन नीचे किया जाता है।

उदार दृष्टि

पहली बात यह है कि आज हम एकान्तवासी रहना अथवा एक कोने की ज़िन्दगी व्यतीत करना छोड़ते जा रहे हैं। जिस गांव या

शहर में हम रहते हैं उसी तक हमारी दृष्टि परिमित नहीं रहती। हम जानते हैं कि हमारे निकटवर्ती स्थान में यदि कोई बीमारी फैली तो हमारे यहां भी उसका आ जाना सहज है। यदि हम अपने स्थान को शुद्ध रखना चाहते हैं तो आवश्यक है कि अपने पड़ोसियो में भी शुद्धता का प्रचार करें। पड़ोसियों की उन्नति में हमारी उन्नति है और उनके नरककुंड में पड़े रहते हुए हम स्वर्गधाम का सुख भोग नहीं कर सकते। इसी कारण से हमें देखना होता है कि हमारे स्थान का ज़िले से, ज़िले का प्रान्त से और प्रान्त का भारत देश से क्या सम्बन्ध है और हम क्रमशः इनकी उन्नति में क्या भाग ले सकते हैं। वरन् हमें यह जानने की अभिलाषा रहती है कि संसार में भारतवर्ष का क्या स्थान है तथा अन्य राष्ट्र भारतवासियों को किस निगाह से देखते हैं।

अन्य देशों का भारत से सम्बन्ध

इसके अतिरिक्त हम देखते हैं कि अन्य देशों में जो लहरें उठती हैं, उनका भी किसी न किसी रूप मे हमारे देश में अवश्य प्रभाव पड़ता है। कौन कह सकता है कि जापान की उन्नति और चीन की जाग्रति ने भारत को कुछ भी शिक्षा नही दी? एशियाई देश कई एक पश्चिमी प्रणालियो का अनुकरण कर अपनी उन्नति की ठान रहे है। भारत भी इस काम में पीछे रहनेवाला नही दीखता और यहां ब्रिटिश-राज्य स्थापना तथा पश्चिमी शिक्षा-प्रचार के कारण इसका योरप से और भी घनिष्ट सम्बन्ध हो चला है।

योरुपीय राजनीति मे प्रवेश

और और बातों में हमारी यह जानने की इच्छा उत्तरोत्तर वृद्धि पर है कि वहां की राजकीय संस्थाएं किस पद्धति से

कार्य सम्पादन करती हैं । हमें क्रमशः यह ज्ञान होता जा रहा है कि योरप में राजा प्रजा की इच्छा से नियत होता है, वहां राजा प्रजा के अधिकारों को पददलित नहीं कर सकता, एवं प्रजा के स्वत्व की रक्षा केवल वहां के ही राज्य को नहीं, वरन् अन्य राष्ट्रों को भी करनी होती है। इस प्रकार कोई राज्य किसी प्रजा पर, अपनी हो चाहे परायी, अत्याचार नहीं कर सकता। ब्रिटिश साम्राज्य की प्रजा होने से हम यह समझने लगे हैं कि हमारा योरप में वही अधिकार है, संसार में हमारा वही स्थान है जो ब्रिटिश राज्य में पैदा हुई प्रजा का होना चाहिए।

स्वावलम्बन की शिक्षा

आजकल भी हमें अपने पांवों पर खड़ा होना सिखाया जा रहा है। प्रत्येक ज़िले में म्युनिसिपल व डिस्ट्रिक्ट बोर्ड का प्रबन्ध मुख्य करके हिन्दुस्तानियों के ही हाथ में है। ये संस्थाएं ही स्वराज्य की पहली सीढ़ियां हैं; इनमें यदि योग्य पुरुष रहें तो हम बड़े बड़े दोषों को दूर कर सकते हैं। हां, यदि हमारी अयोग्यता और खुशामदीपन के कारण उक्त संस्थाओं का उद्देश्य सफल न हो तो दूसरी बात है।

विज्ञान की लहर

विज्ञान एक बड़ी भारी शक्ति है और अन्य महान् शक्तियों की भांति इसका भी कभी कभी विकट दुरुपयोग हो जाता है। परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि इसके प्रभाव से आज दिन संसार एक होता जा रहा है। रेल, तार, डाँक, जहाज़ आदि ने मार्ग को संकुचित कर मनुष्य-समाज का यथेष्ट हित-साधन किया है। भारत भी इस विज्ञान के स्वागत की तय्यारी में तत्पर हो चला है। विज्ञान की लहर दिग्विजयी है, भारत इसके प्रवाह में आये

विना रह नहीं सकता, केवल आवश्यकता यह है कि हम इससे यथोचित लाभ उठावें—उदाहरणार्थ भारतीय कला-कौशल का पुनरुद्धार करें।

साधारणतया समाचारपत्र इसी नवयुग की सृष्टि है। पूर्णतया शिक्षा-प्रचार न होने से यहां पत्र-पाठकों की संख्या योरप अमेरिका की अपेक्षा बहुत कम है, पत्र-संचालिकों की भी आर्थिक दशा अच्छी नहीं, और प्रेस ऐक्ट (Press Act) का न्यारा ही हरदम खटका लगा रहता है; इन कारणों से यहां अनेक पत्र बे-आयी मौत मर जाते हैं, परन्तु "जीता है वह जो मर चुका है क़ौम के लिए" की लोकोक्ति के अनुसार उत्तम विलीन पत्रों का उद्देश्य सदैव जीवित है। स्मरण रहे कि ये ही देश के कम खर्च वालानशीन उपदेशक, अध्यापक, सुधारक और आन्दोलन-कर्ता हैं। निर्बल और असमर्थों के अधिकारों के लिए लड़ना इन्हींका काम है। इसलिए इनके यथेष्ट प्रचार की आवश्यकता है।

समाचारपत्र

विविध कारण-वश विदेश में जीवन व्यतीत करनेवालों की संख्या दिनों दिन बढ़ती जा रही है। इससे एक नवीन समस्या उपस्थित हो गयी है। हमारे बाहर गये हुए भाइयों के साथ अन्य देश-वासी ब्रिटिश प्रजा ने योग्य व्यवहार नहीं किया है और हमारे भाइयों को अनेक कष्ट यातना सहन करनी पड़ी है। अब, जब कि भारतीय वीरों की प्रशंसा चारों ओर हो रही है, हमें आशा है कि ब्रिटिश सरकार साम्राज्य के सम्मान (Honour) के लिए, एवं अपने और हमारे सम्मान के लिए ट्रांसवाल और कनाडा प्रभृति स्थानों में भारतीयों पर पुनः अत्याचार न होने

विदेश में भारतवासी

देगी। भारतवर्ष की उन्नति में इंगलैंड का गौरव है और भारत के सामर्थ्य में ही इंगलैंड की कीर्ति है।

प्रत्येक युग में मनुष्य समाज के लिए निराली निराली समस्याएं रहा करती हैं। हमारा कर्तव्य है कि हम वर्तमान समस्याओं की यथोचित् मीमांसा करें।

षोड़श परिच्छेद

राजकीय घोषणा और हमारे अधिकार

श्रीमती महारानी विक्टोरिया का घोषणापत्र

सपरिषद् श्री महारानी की भारतवर्ष के राजाओं, सरदारों व सर्वसाधारण को घोषणा।

(प्रयाग में गवर्नर-जनरल द्वारा तारीख १ नवम्बर सन् १८५८ ई० को प्रकाशित)

ईश्वर की कृपा से संयुक्त-राज्य ग्रेट ब्रिटन व आयर्लैंड तथा इन देशों के योरप, एशिया, अफरीका, अमरीका और आस्ट्रेलिया में उपनिवेशों की रानी स्वमत-प्रतिपालक श्री विक्टोरिया।

विविध गूढ़ कारणों से हमने धर्म तथा राज्य-सम्बन्धी प्रधानों और पार्लिमेंट में एकत्रित प्रजा के प्रतिनिधियों के आदेश तथा स्वीकृति से भारतवर्ष का राज्य-प्रबन्ध जो कि अब तक माननीय ईस्ट इंडिया कम्पनी को सौंपा हुआ था, अपने अधिकार में ले लेने का विचार कर लिया है।

अतः अब हम सूचित एवं घोषित करते हैं कि उपर्युक्त आदेश तथा स्वीकृति के अनुसार हमने उक्त राज्य-प्रबन्ध

अपने अधिकार में ले लिया है और इस घोषणापत्र द्वारा इस देश की सब प्रजा को आज्ञा देते हैं कि वे हमारे तथा हमारे वारिसों व उत्तराधिकारियों के प्रति वफादार रहें और उनकी सच्ची सेवा करें; एवं जिस किसीको हमें अपने नाम तथा अपनी ओर से भविष्य में समय समय पर अपने इस देश के प्रबन्ध के लिए नियत करना ठीक जचे उसकी आज्ञा पालन करें।

और हमें अपने विशेष विश्वासपात्र प्रिय चचेरे भाई व सलाहकार चार्ल्स जान वाइकाउन्ट केनिंग की राजभक्ति, योग्यता और फैसलों पर भरोसा है। अतः हम उक्त वाइ-काउन्ट केनिंग को इस देश में अपना वाइसराय (प्रतिनिधि) व गवर्नर-जनरल होने के लिए और साधारणतया इस देश का शासन हमारी ओर और हमारे नाम से उन आज्ञाओं तथा नियमों के अनुसार करने के निमित्त, जो उसे समय समय पर हमारे किसी प्रधान मंत्री द्वारा मिले, नियत करते हैं।

और हम इस घोषणा द्वारा मुल्की, फ़ौजी तथा अन्य पदों पर काम करनेवाले माननीय ईस्ट इंडिया कम्पनी के सब कर्मचारियों को उनके विविध पदों पर नियुक्त रखते हैं, किन्तु इनकी नियुक्ति हमारी भावी इच्छा तथा भविष्य में प्रचलित नियमों तथा कानूनों पर निर्भर रहेगी।

और भारतवर्ष के देशी राजाओं को हम सूचित करते हैं कि हम उन सब संधियों व समझौतों को, जो कि उनके साथ माननीय ईस्ट इंडिया कम्पनी ने किये हैं, अथवा जो उक्त कम्पनी की अनुमति से हुए हैं, स्वीकार करते हैं, हम उन पर बड़ी

सावधानी से चलेंगे और आशा है कि वे राजा भी ऐसा ही व्यवहार करने का ध्यान रक्खेंगे।

हम अपना राज्य अधिक बढ़ाना नहीं चाहते। न तो हम अपने देश व अधिकारों पर किसी दूसरे को हाथ बढ़ाने देंगे और न हम दूसरों के देश व अधिकारों पर हाथ बढ़ाये जाने की अनुमति देंगे। हम देशी राजाओं के अधिकार, मान व प्रतिष्ठा का वैसा ही आदर करेंगे जैसा कि अपनों का। और हमारी इच्छा है कि देशी राजा और हमारी प्रजा भी आन्तरिक शान्ति तथा सुराज्य से मिलनेवाले वैभव व सामाजिक उन्नति का उपभोग करें।

जो कर्तव्य हमें अपनी अन्य सब प्रजाओं के प्रतिपालन करने योग्य है, उन सब कर्तव्यों को भारतीय प्रजा के साथ भी पालन करने की प्रतिज्ञा करते हैं। सर्वशक्तिमान परमेश्वर की कृपा से हम ईमानदारी व सच्चे दिल से इस प्रतिज्ञा का पालन करेंगे।

यद्यपि हमको ईसाई मत के सच्चे होने का दृढ़ निश्चय है, तथा हम इस मत से मिलनेवाली शान्ति कृतज्ञता-सहित स्वीकार करते हैं, तथापि न तो अपनी प्रजा को बलात् ईसाई बनाने का हम अपनेको अधिकारी ही समझते हैं और न हमारी ऐसी इच्छा ही है। हमारी राजकीय इच्छा और प्रसन्नता इस बात में है कि धार्मिक विश्वास के कारण न किसीका पक्ष लिया जावे और न किसीको कष्ट दिया जावे। विना पक्षपात सब लोग कानून के अनुसार समान रक्षा का आनन्द पावें। हम अपने सब अधीन कर्मचारियों को बड़ी ताकीद से आज्ञा देते हैं कि वे हमारी प्रजा के धार्मिक विश्वास तथा पूजा में हस्तक्षेप न करें, अन्यथा वे हमारे क्रोध के भाजन होंगे।

हमारी यह भी इच्छा है कि यथा-शक्य हमारे सर्व प्रजा-जनों को, चाहे वे किसी जाति या मत के क्यों न हों, विना रोक टोक व पक्षपात के, उनकी विद्या, योग्यता व ईमानदारी के अनुसार सरकारी पद दिये जावें।

उत्तराधिकारी के नाते वंशानुक्रम से मिली हुई भूमि पर भारतवासियों की कैसी ममता होती है, यह हम जानते और इसका सम्मान करते हैं। हम चाहते हैं कि उचित सरकारी कर देने पर उनके भूमि-सम्बन्धी सब अधिकारों की रक्षा की जावे। हमारी इच्छा है कि कानून बनाते तथा प्रचलित करते समय भारतवासियों के पुराने अधिकार तथा उनकी प्राचीन रीति भांति का यथोचित सम्मान किया जावे।

जो आपदाएं तथा विपत्तिएं उन स्वार्थी लोगों के कार्य से पड़ी हैं जिन्होंने अपने देशवासियों को झूठी खबरों से बहका कर बलवा करा दिया—उनका हमें बड़ा रंज है। हमारी शक्ति तो रणक्षेत्र में उस बलवे को शान्त करने में प्रगट हो गयी; अब हम उन लोगों के अपराध क्षमा करके अपनी दया दर्शाना चाहते हैं जो पहिले बहकाये में आ गये थे, किन्तु अब अपने कर्तव्य पथ पर पुनरारूढ़ होना चाहते हैं।

अधिक खून खराबा रोकने, तथा भारतीय प्रदेशों में शीघ्र शान्ति स्थापन करने के हेतु एक प्रान्त (अवध) में उन लोगों की अधिकांश संख्या को कुछ शर्तों पर क्षमा प्रदान करने की आशा बँधा दी है जिन्होंने उक्त दुःखद बलवे में हमारे राज्य के विरुद्ध अपराध किये थे। जिनके अपराध क्षमा-सीमा के बाहर हैं, उनकी सज़ा प्रगट कर दी गयी है।

हम अपने वाइसराय और गवर्नर-जनरल के उपर्युक्त कार्य को पसन्द और स्वीकार करते हैं और साथ ही यह भी सूचित व घोषित करते हैं कि—

उन अपराधियों को छोड़ कर जिन पर अंग्रेज़ी प्रजा की हत्या में भाग लेना प्रमाणित हो चुका है वा हो जायगा, शेष सब अपराधी हमारी दया के पात्र होंगे, क्योंकि हत्या में भाग लेनेवालों पर दया दर्शाना न्याय-विरुद्ध है।

जिन लोगों ने जान बूझ कर हत्या करनेवालों को आश्रय दिया या जो बलवा करनेवालों के सरदार या उत्ते-जक बने, उनसे केवल जीवनदान का प्रण किया जा सकता है। ऐसे मनुष्यों को दंड देते समय इस बात का पूर्ण ध्यान रक्खा जावेगा कि किन कारणों से वे अपनी राजभक्ति से विचलित हुए। ऐसे मनुष्यों पर, जिनके अपराध का आधार अनजान में उपद्रवियों की झूठी बातों पर विश्वास कर लेना है, बड़ी रियायत की जायगी।

शेष सरकार-विरुद्ध हथियारबन्दों के लिए हम इस घोषणापत्र में प्रतिज्ञा करते हैं कि उनके घर लौट आने तथा शान्ति-पथानुवर्ती होने पर, हमारे अथवा हमारे राज्य व प्रतिष्ठा के विरुद्ध उनके सारे अपराध विना किसी शर्त के क्षमा कर दिये जायंगे व भुला दिये जायंगे।

हमारी राजकीय इच्छा है कि ये दया और क्षमा की प्रतिज्ञाएं उन सबके लिए हैं जो आगामी जनवरी की पहिली तारीख से पूर्व उपर्युक्त शर्तों को व्यवहृत करें।

हमारी यह हार्दिक इच्छा है कि ईश्वर की कृपा से जब भारतवर्ष में पुनः आन्तरिक शान्ति स्थापित हो जावे तो

वहां शांति के समय शिल्प व्यवसाय को उत्तेजना दी जाय, सार्व-जनिक हित के कामों की उन्नति की जाय और ऐसी शासन-प्रणाली चलायी जाय जिससे हमारी भारतवर्ष की प्रजा का सुख मंगल हो। भारतवासियों की सुख समृद्धि में हमारी शक्ति है, उनके संतोष से ही हमारा राज्य रक्षित रहेगा, तथा उनकी कृतज्ञता ही हमारी परम् पुरष्कार होगी। सर्वशक्तिमान परमेश्वर हमें तथा हमारे अधीन कर्मचारियों को ऐसी शक्ति प्रदान करें जिससे प्रजा के हितार्थ हमारी ये इच्छाएं पूरी हो।

अन्तिम वक्तव्य

श्री महारानी का घोषणापत्र हमारे लिए बड़े महत्व की वस्तु है। स्वर्गवासी महाराज सप्तम एडवर्ड तथा वर्तमान महाराज जार्ज पंचम ने भी महारानी के दर्शाये हुए पथ पर चलने की घोषणा की है। हमारा बहुत से अधिकारों को मांगने के लिए आधार यही घोषणापत्र है। यद्यपि इसमे वर्णित हमारे कितने ही अधिकार हमारे पूर्णरूप से अधिकारी होने पर भी हमें अब तक नहीं मिल पाये हैं तथा इस घोषणापत्र को असम्भव सनद (Impossible Charter) या राजनैतिक छल (Political Hypocricy) बतानेवाले अंग्रेज़ी राजनीतिज्ञों (?) का भी अभाव नही है, तथापि हमे हताश नहीं होना चाहिए वरन् धैर्यपूर्वक आन्दोलन जारी रखना उचित है। सफलता होगी और फिर होगी। कतिपय अंग्रेज़ों का व्यक्तिगत मत चाहे जैसा अनुदार हो, अंग्रेज़ जाति का स्वतन्त्रता-प्रेम लोक-प्रसिद्ध है। भारतीयों को भी विश्वास है कि

प्रजा के अधिकारों का महत्व जाननेवाली अंग्रेज़ जाति, यदि और कुछ नहीं तो अपनी कीर्त्ति को ही स्वच्छ रखने के लिए ही, हमें हमारे न्यायानुकूल अधिकार देने में कभी आना-कानी न करेगी। 'भारतभारती' के रचयिता श्रीयुत मैथिली-शरण जी गुप्त के शब्दों में हम—

हों दीन किन्तु रखते मान हैं,
भव्य भारतवर्ष की सन्तान हैं।
न्याय-पूर्ण अधिकार अपने चाहते,
कब किसीसे मांगते हम दान हैं?
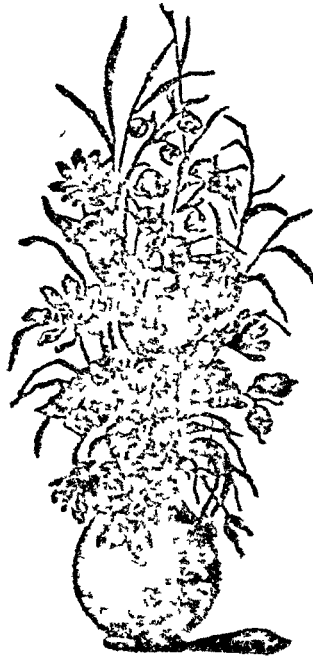
परिशिष्ट

कुछ प्रधान राज्य-कर्म्मचारियों का वेतन

विलायत सरकार

अधिकारी	वार्षिक वेतन
भारत मन्त्री	७५,००० रुपये
उनके प्राइवेट सेक्रेटरी	४,५०० ,,
,, सहायक प्राइवेट सेक्रेटरी...	२,२५० ,,
,, पोलिटिकल एडीकांग	१२,००० ,,
अस्थायी सरकारी भारत-मन्त्री	३०,००० ,,
उनके प्राइवेट सेक्रेटरी	२,२५० ,,
,, सहकारी सेक्रेटरी और कौंसिल के क्लर्क (प्रत्येक)... ..	१२,००० ,,
कौंसिल के १० मेम्बर ,,	१५,००० से १८,००० तक
कौंसिल कमेटियों के सेक्रेटरी ,, ... ,,	,,

भारत-सरकार

अधिकारी	वार्षिक वेतन
वाइसराय और गवर्नर-जनरल ...	२,५०,८०० रुपये
उनके प्राइवेट सेक्रेटरी	२४,००० ,,

उनके फौजी सेक्रेटरी और एडीकांग १८,००० रुपये
” डाक्टर १४,४०० ”
” कौंसिल के छः मेम्बर (प्रत्येक) ८०,००० ”
कमांडर-इन-चीफ़ या जंगी लाट १,००,००० ”
उनके फौजी सेक्रेटरी १८,००० ”
रेलवे बोर्ड का सभापति ६०,००० से ७२,००० तक ”
” के दो मेम्बर (प्रत्येक) ४८,००० ”
भारत सरकार के फ़ौज, सार्वजनिक कार्य,
और कानून विभाग के सेक्रेटरी (प्रत्येक) ४२,००० ”
भा० स० के कोष, विदेश, इंगलैंड (विलायत),
कृषि, व्यापार, और दस्तकारी विभागों के
सेक्रेटरी (प्रत्येक) ४८,००० ”
शिक्षा विभाग के सेक्रेटरी . . . ३६,००० ”
जोयंट सेक्रेटरी .. . .. ३०,००० ”
कंट्रोलर और आडिटर जनरल . ... . .४२,००० ”
२ एकाउनटैंट जनरल १म् श्रेणी (प्रत्येक) ३३,००० ”
२ ” २य ” ” ३०,००० ”
४ ” ३य ” ” २७,००० ”
१ डाक और तार विभाग के डाइरेक्टर
जनरल ३६,००० से ४२,००० तक
४ पोस्टमास्टर जनरल २१,००० ” २४,००० ”
६ ” १८,००० ” २१,००० ”
१म् माप विभाग का डाइरेक्टर . . . २४,००० ”
भा० स० के कोष और विदेश विभाग के
डिप्टी सेक्रेटरी (प्रत्येक)... ... .२७,००० ”

कानून और विलायत विभाग के डिप्टी सेक्रेटरी	२४,००० रुपये
जंगलात का इन्स्पेक्टर जनरल	३१,८०० ”
भारतीय खानों का चीफ़ इन्स्पेक्टर	२४,००० ”
कृषी का इन्स्पेक्टर जनरल	२१,००० से २७,००० तक ”
इंडियन मेडिकल सर्विस का डाइरेक्टर जनरल	३६,००० ”
सैनिटरी कमिश्नर	२४,००० ”
व्यापार विभाग का डाइरेक्टर जनरल	२४,००० ”
छपाई और स्टेशनरी का कंट्रोलर	१८,००० से २७००० ”

प्रान्तिक सरकार

(बंगाल)*

अधिकारी	वार्षिक वेतन
गवर्नर	१,२०,००० रुपये
उनके प्राइवेट सेक्रेटरी	१८,००० ”
” डाक्टर	१२,००० ”
” फ़ौजी सेक्रेटरी और एडीकांग	१२,००० ”
” कौंसिल के तीन मेम्बर (प्रत्येक)	६४,००० ”
मालगुज़ारी के बोर्ड का मेम्बर	३६,००० से ४५,००० तक
डिवीज़नों के ५ कमिश्नर (प्रत्येक)	३५,००० रुपये

*इससे कुछ थोड़े बहुत अन्तर से बम्बई और मद्रास में भी ऐसा ही स्टाफ है ।

गवर्मेंट का चीफ़ सेक्रेटरी	४०,००० रुपये
" के तीन " (प्रत्येक)	३३,००० "
तीन अंडर-सेक्रेटरी "	१२,००० "
ऐक्साइज़ कमिश्नर	२७,००० "
शित्ता-विभाग के डाइरेक्टर... ...	२४,००० से ३०,००० तक
ऐडवोकेट जनरल	४८,००० रु०
गवर्मेंट सालिसिटर	६०,००० "
कलकत्ते का विशप (बड़ा पादरी)	४५,६८० "
बंगाल का चीफ़ जस्टिस ..	७२,००० "
कलकत्ता हाईकोर्ट के १५ जज (प्रत्येक)	४८,००० "
३ डिस्ट्रिक्ट और सेशन जज १म् श्रेणी (प्रत्येक)	३६,००० "
१३ " २य " "	३०,००० "
१५ " ३य " "	२४,००० "
४ जज . प्रत्येक १२,००० से	१६,००० "
कलकत्ता हाईकोर्ट के २ रजिस्ट्रार	२०,४०० और २२,५०० रु०
१२ मैजिस्ट्रेट और कलेक्टर १म् श्रेणी (प्रत्येक)	२७,००० "
१३ " " २य " "	२१,००० "
१४ " " ३य " "	१८,००० "
११ कलकत्ते में कस्टम कलेक्टर (प्रत्येक)	२७,००० "
कलकत्ता कारपोरेशन का अध्यत्त	४२,००० "
" " " सहायक अध्यत्त	१८,००० "

प्रान्तिक सरकार

(संयुक्त प्रान्त)*

अधिकारी	वार्षिक वेतन
लेफ़्टिनेंट गवर्नर	१,००,००० रुपये
गवर्मेंट का चीफ़ सेक्रेटरी	३६,००० „
„ के दो सेक्रेटरी (प्रत्येक) २०,००० से	२२,००० „
„ तीन अंडर-सेक्रेटरी „	१२,००० „
मालगुज़ारी के बोर्ड के दो मेम्बर (प्रत्येक)	४२,००० „
„ का सेक्रेटरी	२०,००० „
९ डिवीज़नों के कमिश्नर (प्रत्येक)	३५,००० „
जुडिशल कमिश्नर	४८,००० „
२ एडिशनल जुडिशल कमिश्नर (प्रत्येक) ३४,००० से	४०,०००
१९ मैजिस्ट्रेट और कलेक्टर १म् श्रेणी (प्रत्येक)	२७,००० „
१७ „ „ २य „ „	२२,००० „
४ डिप्टी कमिश्नर १म् „ „	२२,००० „
१० „ २य „ „	२०,००० „

*इससे कुछ थोड़े बहुत अन्तर से पंजाब, बिहार-उड़ीसा और बर्मा में भी ऐसा ही स्टाफ़ है।

१४ जायंट मैजिस्ट्रेट	१म् श्रेणी (प्रत्येक)	१२,०००	रुपये
६ ऐसिस्टैंट कमिश्नर	१म् ,, ,,	९,६००	,,
२० जायंट मैजिस्ट्रेट और ऐसिस्टैंट कमिश्नर	,,	८,४६०	,,
२ जिला और सेशन जज	१म् श्रेणी (प्रत्येक)	३६,०००	,,
७ ,, ,,	२य ,, ,,	३०,०००	,,
६ ,, ,,	३य ,, ,,	२७,०००	,,
१० जिला और सेशन जज	४र्थ श्रेणी (प्रत्येक)	२२,०००	,,
३ ,, ,,	५म् ,, ,,	२०,०००	,,
हाईकोर्ट का रजिस्ट्रार		१९,२००	,,
शिक्षा-विभाग का डाइरेक्टर		२४,०००	,,
कमिश्नर कमाऊं		३०,०००	,,
१ डिप्टी कमिश्नर ,,		१८,०००	,,
२ ,, ,, (प्रत्येक)		१२,०००	,,
लखनऊ का सिटी-मैजिस्ट्रेट		१२,०००	,,
देहरादून का सुपरिंटेंडेंट		१८,०००	,,
अफीम का सरकारी एजंट		३०,००० से ३६०००	,,

प्रान्तिक सरकार

(मध्य प्रदेश)*

अधिकारी	वार्षिक वेतन
चीफ़ कमिश्नर	६२,००० रुपये
फाइनैन्शल कमिश्नर	४२,००० "
डिवीज़नों के २ कमिश्नर (प्रत्येक)	३३,००० "
" २ " "	३०,००० "
४ डिप्टी कमिश्नर १म् श्रेणी (प्रत्येक)	२७,००० "
१० " २य " "	२१,६०० "
१२ " ३य " "	१८,००० "
४ ऐसिस्टैंट कमिश्नर १म् श्रेणी (प्रत्येक)	१०,८०० "
१० " २य " "	८,४०० "
" ३य " "	४,८०० से ६,००० "
१ जुडिशल कमिश्नर	४२,००० "
२ ऐडिश्नल जुडिशल कमिश्नर	३६,००० और ३३,००० "
शिक्षाविभाग का डाइरेक्टर	१८,००० से २४,००० "

*आसाम का स्टाफ़ इससे कुछ कम वेतन का है। वहां के चीफ़ कमिश्नर को ५६,००० रुपये सालाना मिलते हैं। अन्य चीफ़ कमिश्नरिएं (ब्रिटिश बलोचिस्तान, पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्त, कुर्ग, अंडमन-निकोबार, अजमेर-मेरवाड़ा और देहली) छोटी छोटी हैं। देहली के चीफ़ कमिश्नर को ३६,००० रुपये सालाना मिलते हैं।

पुलिस

अधिकारी	मासिक वेतन		
इन्स्पेक्टर जनरल	२,०००	से ३,०००	रुपये
डिप्टी इन्स्पेक्टर जनरल	१,५००	,, १,८००	,,
(जिला) सुपरिंटेंडेंट	७००	,, १,२००	,,
(सब-डिवीज़न) सहायक सुपरिंटेंडेंट	३००	,, ५००	,,
डिप्टी सुपरिंटेंडेंट	२५०	,, ५००	,,
इन्स्पेक्टर	१५०	,, २५०	,,
सब-इन्स्पेक्टर	५०	,, १००	,,
हेड कान्स्टेबल	१५	,, २०	,,
कान्स्टेबल	८	,, १५	,,

भारतवर्ष में स्वाधीन राज्य

नाम	स्थिति	क्षेत्रफल वर्गमील	जन-संख्या	व्यवस्था
नैपाल	संयुक्त प्रान्त व विहार के उत्तर में पहाड़ी रियासत	५४०००	पचास लाख	स्वाधीन। इसकी सीमा पर अंग्रेज़ी सरकार का रैज़ीडैंट रहता है, परन्तु वह आन्तरिक राज्य प्रबन्ध में कुछ हस्तक्षेप नहीं कर सकता।
भूटान	आसाम के उत्तर में	१८०००	तीन लाख	भूटान को सालाना एक लाख रुपया मिलता हैं और वह बाहरी मामलों में अंग्रेज़ी सरकार की सलाह से काम करती है।

भारतवर्ष में वैदेशिक राज्य

नाम	स्थिति	क्षेत्रफल वर्गमील	जन-संख्या	व्यवस्था
गोवा	बम्बई के दक्षिण में	१३०१	पांच लाख	पुर्तगाल के अधीन इनके प्रबन्ध के लिए एक कौंसिल-युक्त गवर्नर-जनरल गोवा में रहता है, जिसे दीवानी फ़ौजदारी के मुख्य मुख्य अधिकार प्राप्त हैं। उसकी प्रायः पांच साल में बदली होती है। गोवा का नया शहर पंजम कहा जाता है।
डामन	गुजरात के किनारे पर	२२	अठारह हज़ार	
ड्यू	काठियावाड़ के किनारे पर एक टापू है	२०	पंद्रह हज़ार	

स्थान	स्थिति	कुल संख्या	जनसंख्या	विवरण
यनाम	गोदावरी नदी के डल्टा के किनारे पर	कुल मिला कर २०३	दो लाख ८२ हज़ार	फ्रांस के अधीन। ये उपनिवेश २० सर्वसाधारण की सभाओं (कम्यून्स) में विभक्त हैं और एक साधारण निर्वाचित समिति भी स्थापित है। प्रवन्ध के लिए एक गवर्नर तथा उसकी सहायतार्थ एक मन्त्री, कुछ विविध विभागों के सेक्रेटरी और एक न्यायाध्यक्ष पांडिचारी में रहते हैं। यहां की प्रजा को एक ऐसा अधिकार प्राप्त है जो उदार ब्रिटिश सरकार की भारतीय प्रजा को भी अभी मिलना बाकी है, अर्थात् तीन लाख से कम जन-संख्या के रहते वे अपनी ओर से दो प्रतिनिधि फ्रांस की महती विचारसभा (पार्लिमेंट) में भेज सकते हैं।
माही	मालवार के किनारे पर			
कारीकाल	कारोमंडल के किनारे पर			
पांडिचरी	"			
चन्द्रनगर	कलकत्ते के पास			

भारतीय जनता के धर्म और शिक्षा

धर्म	जनसंख्या		शिक्षित	
	मर्द	औरत	मर्द	औरत
सनातनधर्मी आर्य्यसमाजी और ब्रह्म-समाजी	११,०८,६५,७३१	१०,६७,२०,७१४	१,१२,२३,१३४	८,१४,८१०
सिख	१७,३४,७७२	१२,७६,६६७	१,८४,१६३	१७,२८०
जैन	६,४३,५५३,	६,०४,६२६	३,१८,५८५	२४,१२०
बौद्ध	५२,८६,१४२	५४,३५,०८६	२१,३४,३८१	३,१७,३३८
कुल हिन्दू	११,८५,३०,१६६	११,४०,४०,०६६	१,३८,६०,२६३	११,७३,५४८

[library stamp]

मुसलमान	३,४७,०६,३६५	३,१८,८३,८१२	२३,८६,७६६	१,३७,८०७
ईसाई	२०,१०,७२४	१८,६५,४७२	५,८८,५७०	२,५२,२६५
पारसी	५१,१२३	४८,६७३	३६,९९५	३१,२१८
Animistic अनार्यादि	५०,८८,२४१	५१,२६,३०३	५३,८३३	२,९८७
अन्य	२८,८१८	२६,२६३	६,३८८	२,९०८
टोटल	१६,०४,१८,४७० + १५,२९,९६,९१९ = ३१,३४,१५,३८९		१,६६,३८,८१५ + १६,००,७६३ = १,८५,३९,५७८ = ६ फी सैंकड़े से भी कम	

नोट—हमने इस पुस्तक के पृष्ठ ५ पर भारतवर्ष की कुल जनसंख्या साढ़े इकतीस कोटि से कुछ
क दिखलायी है, परन्तु ऊपर का हिसाब तथा आगे दिया हुआ भारतीय जनता के उद्योग धन्धों का
व हम उससे कुछ कम संख्या का मिला है।

भारतीय जनता के उद्योग धन्धे

क—कच्चे पदार्थों की पैदावार...	... २२,७०,३०,०६२
(१) खेती, उद्यान, पशुपालन, मछली पकड़ना या शिकार	२२,६५,५०,४८३
(२) खणिज द्रव्यों को निकालना	५,२६,६०६
ख—भौतिक पदार्थों को तय्यार करना	५,८१,६१,१२१
(३) दस्तकारी–कपड़े बुनना, धात, चमड़े, लकड़ी का काम, सामान व मकानात बनाना	३,५३,२३,०४१
(४) माल ले जाना—जल और स्थल के मार्ग या रेल के रास्ते अथवा तार, डाक और टेली-फोन की नौकरियें	५०,२८,६००
(५) व्यापार—महाजनी, दल्लाली, कपड़े, खाल, चमड़े, धातु, लकड़ी, आदि के पदार्थों का क्रय विक्रय	१,७८,३६,१०२
ग—शासन और लिखाई पढाई आदि (Liberal Arts)	१,०६,१२,१२३
(६) फ़ौज और पुलिस	२३,६८,५८६
(७) राज्य प्रबन्ध	२६,४८,००५

(८) शिक्षा, कानून, औषधालय व संगीत आदि	५३,२५,३५७
(९) अपनी आमदनी (सूद, किराया आदि) पर निर्वाह करनेवाले	५,४०,१७५
घ—विविध	१,७२,८६,६७८
(१०) घरेलू नौकर चाकर	४५,९९,०८०
(११) जिनके धन्धों का ठीक ठीक हिसाब नहीं लगा	९२,३६,२१०
(१२) अनुत्पादक—जेलों और अस्पतालोंमें पड़े हुए, भिक्षुक और वेश्यादि	३४,५१,३८१
कुल योगफल	३१,३४,७०,०१४

ग्रन्थकर्ता का निवेदन

भारतीय ग्रन्थमाला

प्रिय पाठकवर्ग ! हम भारतीय ग्रन्थमाला की प्रथम पुस्तक की भेट लेकर आपकी सेवा में उपस्थित होते हैं। इसके बाद हमारे मन में भारतवर्ष-सम्बन्धी किस विषय की पुस्तक लिखने की है अथवा आगामि पुस्तक कब प्रकाशित होगी, इसके उत्तर देने का हम सहसा साहस नही कर सकते, कारण कि हम अपने सामर्थ्य की क्षुद्रता से भली भांति परिचित हैं और बने जहां तक ऐसी प्रतिज्ञाओं से बचना ही चाहते हैं जिनका पालन या निभाव कठिन हो।

हां, हम इतना कहे देते है कि दो पुस्तकों की सामग्री बिलकुल तय्यार है और इनके प्रकाशन में इतनी ही देरी समझिए जितनी कि इनके उदार सहायक (ग्राहक) व संरक्षक मिलने मे है। ईश्वरेच्छा हुई तो ये शीघ्र ही मिल जायंगे। उक्त दो पुस्तक ये है—

(१) **भारतीय राष्ट्रनिर्माण।** आप जानते हैं कि भारत मे चहुं ओर से राष्ट्र राष्ट्र की पुकार आ रही है, परन्तु

यदि यहां की जनता यह जानती कि राष्ट्र किसे कहते हैं, उसके लिए क्या क्या साधन आवश्यक होते हैं, और हम उनमें क्या क्या सहायता दे सकते है, तो आज यहां राष्ट्र-निर्माण-यज्ञ पूर्ण हो ही गया होता। अस्तु, ऐसे ही विचार से यह पुस्तक लिखी गयी है। इसका प्रचार आपके हाथ है।

(२) **भारतीय छात्र-विनोद**—या हमारे पाठ्य विषय। इसमें विद्यार्थियों के मुख्य मुख्य पाठ्य विषयों (भुगोल, गणित, विज्ञान, इतिहास, सम्पत्ति-शास्त्र, नीति और तर्क-शास्त्र) की संक्षिप्त विवेचना की गयी है, इनका क्या महत्व है, क्या परस्पर सम्बन्ध है, तथा इनके पढ़ने की आवश्यकता ही क्या है—इत्यादि इत्यादि। इस पुस्तक का कुछ अंश अलीगढ़ के 'माहेश्वरी' में प्रकाशित हो चुका है, उसके पाठकों से इसका मर्म छिपा नही है।

नोट—यों तो हमारी इच्छा है कि हमारी पुस्तको का मूल्य यथा-शक्य कम रहे, तथापि जो प्रेमी-जन पहिले से ही सहायक-श्रेणी मे नाम लिखाने की कृपा करेंगे उनको दो आने फ़ी रुपये की छूट भी मिलेगी।

—भगवानदास माहेश्वरी।

माहेश्वरी भाइयों से अपील !

महाशयो ! क्या आपको विदित नही है कि हिन्दू जाति के उत्थान के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि उसका कोई भी अंग पिछड़ा न रहे ?

क्या आपका यह कर्त्तव्य नही है कि अपनी जाति की, अपनी सभा की, तथा विद्यार्थी आश्रम की सुध लो? यदि हां, तो वस, आपको चाहिए कि इनकी उन्नति के पथ-दर्शक अपने जातीय मासिकपत्र 'माहेश्वरी' की मन से और धन से, लेखों से और चन्दे से, खूब सहायता करो, जो कि अनेक कष्ट सहने पर भी पांच साल से अपकी सेवा करता आ रहा है।

प्रकाशक "माहेश्वरी"--अलीगढ़।

भ्रम-निवारक-पत्र

इस पुस्तक का प्रूफ यथाशक्य सावधानी से देखा गया है, फिर भी यदि कोई त्रुटि रह गयी हो तो विद्वान पाठक उसे सुधार कर पढ़ सकते हैं। नीचे दो एक खास खास बातों का उल्लेख किया जाता है—

जहां कहीं कुछ स्पष्ट लिखा हुआ न हो, क्षेत्रफल सर्वत्र वर्गमीलों में और हिसाब रुपयों में समझना चाहिए।

पृष्ठ १० की १३वीं पंक्ति में '१२००)' के स्थान '१५००)' होना चाहिए।

पृष्ठ २८ की १८वीं पंक्ति में 'सरकार की कार्य्यकारिणी कौंसिल' के स्थान 'सरकार के शासन-विभाग' शब्द होने चाहिएं।

पृष्ठ ७७ की १२वीं पंक्ति में 'जिसका उल्लेख...है' शब्द नहीं होने चाहिएं।

परिशिष्ट के पृष्ठ १२ में "भारतीय जनता के धर्म और शिक्षा" के हिसाब में बौद्ध, जैन, सिख आदि की संख्याएं "कुल हिन्दू" में रख दी गयी हैं। इस बात में मतभेद होने की सम्भावना है, अतः पाठक चाहें तो हिन्दू धर्म के बाहर वाले धर्मों की संख्याएं अलग करके पढ़ सकते हैं।

"परिशिष्ट" भाग विषयानुक्रमणिका में छपने से रह गया है।